RAJYA SABHA

Friday, 18th. *March* 1955

The House met at eleven of the clock, MR. CHAIRMAN in the Chair.

PRESENTATION OF REPORT OF COMMITTEE ON PETITIONS RELATING TO THE CODE OF CRIMINAL PROCEDURE (AMENDMENT) BILL, 1954.

SHRI JASPAT ROY KAPOOR (Uttar Pradesh): Sir, I beg to present the Report of the Committee #on Petitions, dated 17th March 1955, in respect of a petition relating to the Code of Criminal Procedure (Amendment) Bill, 1954.

We have directed that a copy be circulated to hon. Members.

JRKSOLUTION REGARDING MEMORIAL TO KALIDAS—continued

MR. CHAIRMAN: Yes, Mr. Agni-bhoj.

श्री आर० यू० अग्निभोज (मध्य प्रदेश) : माननीय सभापति महोदय, मुझे प्रसन्नता है कि आज मुझे उन प्रातः स्मरणीय भारतीय महाकवि कालीदास जी के सम्बन्ध में इस महान् भवन के सामने अपने उद्गार प्रस्तुत करने का अवसर मिला है। मैं सबसे पहले अपने मित्र, विजयवर्गीय जी को धन्यवाद दूं कि उन्होंने यह प्रस्ताव हमारे समक्ष लाकर हमें यह अवसर दिया कि हम अपने प्राचीन भारतीय महाकवि की याद कर उनके सम्बन्ध में कुछ चर्चा करें।

महानुभाव, साहित्य का जीवन, संस्कृति और समाज से अनन्य सम्बन्ध है। जिसके सामाजिक जीवन में साहित्य न हो, वह जीवन ही अधूरा है। मैं यह समझता हूं कि हमारा समाज, हमारी संस्कृति और हमारे जीवन और संसार का सम्पूर्ण प्रवाह हमारे मस्तिष्क, विचार और कल्पनाओं पर आधारित रहता है। जिस समाज में तर्क नहीं, जिस समाज में कल्पना नहीं, जिस समाज में विचार नहीं, जिस समाज में भावना नहीं, वह समाज निर्जीव, जड़ अथवा पशु तुल्य होता है। परन्तु यह हमारा सौभाग्य है कि संसार में भारतीय संस्कृति का सबसे पहले उदय हुआ और इस संस्कृति के उत्थान में, इस संस्कृति की स्थापना में, इस संस्कृति को आगे बढ़ाने में हमारे महापुरुष, विचारक और वे लोग जिनकी सजीव कल्पनाओं, जिनके उन्नत विचार, जिनकी पवित्र और प्रबल वाणी ने हमारे समाज में वह साहित्य पैदा किया जिससे हमारा समाज और हमारे समाज का जीवन एक प्रवाह धारण कर संसार के सामने पवित्र गंगा के समान आया, उन्हीं विचारक, साहित्यिक, लेखक और महान कल्पना वाले महापुरुषों में प्रातः स्मरणीय कालिदास भी हैं। मैं आपसे कहूं कि आज संसार के जो साहित्य बहुत ही समुन्नत समझे जाते हैं और दुनिया में अन्य भाषाओं के साहित्य जिनके सामने फीके पड़ गये हैं वे पन्द्रहवीं, सोलहवीं, सत्रहवीं और अठ्ठारहवीं शताब्दियों में लिखे गये थे।

SHRI KISHEN CHAND (Hyderabad): But Greek literature is as old as the second century B.C.

श्री आर० यू० अग्निभोज : मैं उस पर आता हूं। मेरे मित्र ने ग्रीस के सम्बन्ध में संकेत किया है, परन्तु मैं उनसे प्रार्थना करूं कि ग्रीस देश भी भारत के समान एक बहुत ही सुसंस्कृत देश रहा है। उसमें विचारक पैदा हुए, तत्वज्ञानी पैदा हुए, फिलॉसॉफर पैदा हुए, पर कालिदास की टक्कर का कोई कवि पैदा नहीं हुआ। यह इतिहास आपको बतायेगा, और इसलिए मैं आपसे यह प्रार्थना करूं कि हमारे ये कवि कवि होने के साथ ही साथ तत्वज्ञानी भी थे। ग्रीस में तत्वज्ञानियों में सॉक्रेटीज (सुकरात) और दूसरे महान विचारक पैदा हुए और उनके सामने हमारा मस्तिष्क नत है। किन्तु विचार के साथ काव्यमय वाणी में

[श्री आर० यू० अग्निभोज]

साहित्य का सृजन करना, यह केवल भारत के हिस्से में ही आया है, और इसलिए जब हम इस दृष्टि से देखते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि संसार में प्रत्येक भाषा में उनकी एंकेडेमी हैं, उनकी संस्थाएं हैं। शेक्सपियर के लिए दुनिया में क्या क्या हो रहा है, अंगरेजी साहित्य ने उसके लिए क्या किया है। फ्रान्स के इतिहास में देखिये कि वहां के एक कवि को और कुछ प्राचीन कवियों और लेखकों को कितना प्रोत्साहन दिया गया। किन्तु हमारे दुर्भाग्य की बात है कि ईसा की एक शताब्दी पूर्व कालिदास के पैदा होने के बावजूद भी हम आज तक उनके लिए कुछ न कर सके। भारत के किसी भी साहित्यकार से पूछिये, जिसका अंग्रेजी और दूसरी भाषाओं के साहित्य में और इतिहास में दखल है और जिसका उन भाषाओं में प्रभाव है, अस्तित्व है, कि कालिदास के बारे में आप क्या जानते हैं, तो भारतीय भाषा के कालिदास, उनके ग्रंथ, उनके विचार, उनके साहित्य आदि के बारे में उनको शून्य पाइयेगा। आज के वे जो हमारे पाश्चात्य शिक्षा से प्रभावित कवि और लेखक हैं वे शेक्सपियर के विषय में अधिक जानते हैं, गेटे के विषय में अधिक जानते हैं, रोमा रोलां के विषय में अधिक जानते हैं, और संसार के अन्य बड़े बड़े लेखकों के सम्बन्ध में अधिक जानते हैं। पर कालिदास के सम्बन्ध में उनसे पूछिये तो उन्हें पता नहीं लगेगा कि मेघदूत किसने लिखा, शाकुन्तलम् किसने लिखा और इसी तरह के बड़े बड़े साहित्यिक ग्रन्थ किसने लिखे, कभी उनसे आप यह पता नहीं पाइयेगा कि आखिर इन ग्रन्थों में है क्या। किन्तु यदि आप देखें तो कालिदास ने उस साहित्य का सृजन किया दो हजार वर्ष पहले, जिसको कि जब उन पाश्चात्य विद्वानों ने पढ़ा जिनके कि इस देश के लोग भक्त हैं, तो वे कालिदास की कृतियों से बड़े प्रभावित हुए, शाकुन्तलम् को सिर पर रखकर तमाम महाकवि और लेखक नाचने लगे। और वह कौन सा स्थल है जिसे पढ़कर वह नाचने लगे? वह है उस समय का वर्णन जब कण्व ऋषि के आश्रम से शकुंतला का विछोह होने लगा, वह वहां से जाने लगी---

"यात्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया....."

MR. CHAIRMAN: We all know that.

श्री आर० यू० अग्निभोज : मैं समझता हूं कि हमारे संस्कृत के विद्वान जो कालिदास से परिचित हैं वे इस श्लोक को समझते हैं।

SHRI V. K. DHAGE (Hyderabad): But what is the sloka, Sir?

MR. CHAIRMAN: Everybody knows it; it is well known.

श्री आर० यू० अग्निभोज : उसका अर्थ मैं समझा देता हूं। उसका अर्थ यह है कि कण्व ऋषि कहते हैं कि आज शकुंतला मेरे आश्रम को छोड़कर बाहर जा रही है...

MR. CHAIRMAN: He is interpreting.

श्री आर० यू० अग्निभोज : मैं ऋषि हूं, मैं ब्रह्मचारी हूं, और जंगल में रहने वाला हूं। एक पराई कन्या को मैंने आश्रम में रखकर उसका पालन किया। वह अब इस आश्रम को छोड़कर जा रही है और यदि उसके जाने से मेरा हृदय इतना संतप्त होता है, मेरा कंठ भर आता है, मेरी आंखों में आंसू आ जाते हैं, तो बताओ जो सांसारिक पुरुष हैं जिसके घर में कन्या पैदा होती है, जब वह कन्या दूसरे घरबार जाती है तो उसके हृदय में क्या बीतती है?

यह मानवीय हृदय, मानवीय आत्मा और मानवीय विचारों का श्लोक है। इसकी कल्पना केवल अपने लिए ही नहीं किन्तु सांसारिक पुरुषों के लिए की है। उन्होंने कहा है कि जब मुझे इतना कष्ट होता है तो सांसारिक पुरुषों को कितना

कष्ट होता होगा। इस तरह का साहित्य कालिदास ने ही पैदा किया था। आज हम जो चिट्ठियां भेजते हैं वे हम यंत्रों द्वारा, तारों, और विमानों द्वारा भेजते हैं किन्तु यह महाकवि कालिदास की ही कल्पना थी कि उन्होंने अपने संदेश मंडराते हुए मेघों के हाथ, गरजते हुए बादलों के हाथ और उड़ते हुए पक्षियों द्वारा एक जगह से दूसरी जगह भेजना बताया है। एक दिन साइंस यह सिद्ध कर देगा कि मेघदूत में जो वर्णन इस बारे में लिखा गया है, वह केवल काल्पनिक नहीं था। वह तो आने वाला भविष्य सिद्ध कर देगा कि उन्होंने जो बातें मेघदूत में वर्णन की हैं वे काल्पनिक नहीं थीं बल्कि सत्य थीं।

हम सब लोग यह चाहते हैं कि केवल कालिदास का ही साहित्य अमर न किया जाय बल्कि हमारे देश के जो पुराने मुनि, ऋषि, लेखक हो चुके हैं वे सब हमारे सामने आयें। वे सब लोग हमारे सामने नये रूप में आयें, नये जीवन, नये अनुभवों और नये विचारों में आयें ताकि हम उन सब का अनुसरण कर सकें। मैं तो यहां तक चाहूंगा कि "चरक" का जीवन भी लिखा जाय। मैं तो यहां तक चाहूंगा कि हमारे देश में प्राचीनकाल से जो दूसरे विद्वान हो गये उन सब की कृतियां फिर से पुनर्जीवित करें। हमारे देश में जो प्रसिद्ध कवि "शंकर" अपनी रचनायें छोड़ गये हैं उनकी कृतियों को भी हमें पुनर्जीवित करना चाहिये। हमारे जितने भी प्राचीन और विद्वान कवि लोग अपनी कृतियां छोड़ गये हैं वह सब जीवित संस्कृत हैं किन्तु हमारी अज्ञानता के कारण उनमें धूल जम गई है। यह धूल किसी दूसरे ने नहीं जमाई है बल्कि हमने अपनी अज्ञानता के कारण उस धूल को अभी तक नहीं उतारा है। अब हम सब लोगों का यह कर्तव्य है कि हम अपने प्राचीन लेखकों और विद्वानों की कृतियों से जो हमारी अज्ञानता के कारण धूल से ढकी हुई हैं उन से धूल दूर करें। यही इस प्रस्ताव का आशय है। मेरे कहने का मतलब यह है कि हमने अपने प्राचीन ग्रन्थों में जो धूल डाल दी है उसको हमें ही दूर करना है। यह धूल किसी दूसरे ने नहीं डाली है। हमारे ही समाज ने डाली है। जो जीवित संस्कृत है वह अभी तक मरी नहीं है वह धूल पड़ने के कारण छिपी हुई है, जब हम उस धूल को दूर कर देंगे तो वह फिर से पुनर्जीवित हो जायेगी। इसलिए मैं चाहता हूं कि मेरे मित्र श्री विजयवर्गीय जी ने जो प्रस्ताव आपके समक्ष उपस्थित किया है, उसका सदन हृदय से समर्थन करे।

हमारा देश एक धर्मनिरपेक्ष राज्य है, धर्महीन राष्ट्र नहीं है, जिसमें धर्म का समन्वय है, ऐसा राष्ट्र हम बना रहे हैं। अगर हमने कालिदास के साहित्य को पुनर्जीवित नहीं किया तो यह हम सब के लिए एक दुःख की बात होगी। इसके साथ ही साथ मुझे यह भी कहना है कि इस प्रस्ताव में "टैंपल" की जगह "कालिदास भवन" का जो सुझाव रखा गया है वह भी उचित है, इस बारे में किसी को कोई विरोध नहीं हो सकता है। मैं यहां पर एक घटना का वर्णन कर देना चाहता हूं। पार्टीशन से पहले मध्य प्रदेश की सरकार ने एक स्कूल खोला था जिसका नाम उसने "विद्या मंदिर" रख दिया था। उस जमाने में जो लीगी मनोवृत्ति के लोग थे, उन्होंने इसका विरोध किया था। इसलिए मैं कहता हूं कि "टैंपल" की जगह "भवन" रख दिया जाय तो उचित होगा।

इसके बाद मैं यह चाहूंगा कि सरकार का भी यह कर्तव्य हो जाता है कि हमारे देश में जितना भी पुराना साहित्य, इतिहास और दूसरी चीजें हैं, उनको फिर से पुनर्जीवित करें। इस प्रस्ताव में जो बात कही गई है उसके लिए सरकार को मदद करना चाहिये। जब हमारी सरकार का आर्कियोलॉजिकल विभाग पुराने खंडहर को खोदने में इतना रुपया खर्च कर रहा है तो मेरी समझ में नहीं आता है

[श्री आर० यू० अग्निभोज]

कि कालिदास के सम्बन्ध में क्यों न एक ऐसी अकादमी खोल दें जहां पर उनकी कृतियों के बारे में लोगों को ज्ञान हो और संस्कृत का भी सृजन हो सके। मुझे पूर्ण आशा है कि सरकार इस ओर अवश्य ध्यान देगी और इस विषय में आवश्यक कदम उठायेगी। इन शब्दों के साथ मैं इस प्रस्ताव का हृदय से समर्थन करता हूं।

DR. SHRIMATI SEETA PARMANAND (Madhya Pradesh): Mr. Chairman, it is with great pleasure that I rise to support this Resolution. To talk or. the floor of this House before such a distinguished gathering to convince them about the merits of Kalidas te trying to convince the convinced and to try to put Kalidas's attainments here is like trying to show light to the Sun, in my opinion. There may be some who are unconvinced but that •would be a negligible number but perhaps amongst those unconvinced, not because of the merits or, demerits of the poet concerned but for some other reason, would be people of the Government benches and it is for those people that I am speaking here today.

Sir, as a woman, to begin with, I would like to pay homage *o Kalidas who has, in varioua ways, raised the status of women through his works. I would remind the House of how in Raghuvamsa he has put down the age-old ideal of women before the people by saying:

गृहिणी सचिवः सखीमिथः
प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ ।
करुणा विमुखेन मृत्युना
हरता वद त्वां कि न मे हृतम् ।।

I think I will not translate it. Perhaps everybody understands it.

SHRI V. K. DHAGE: No, we do not.

SHRI M. GOVINDA REDDY (Mysore): No, we do not understand.

DR. SHRIMATI SEETA PARMANAND: If there are some people who are not conversant with Sanskrit to that extent, it would not be possible" to translate the whole verse here. This would he understood even by a matriculate student. The verse says: "You were the 'grahani and sachiva', wife and counsellor, you were my companion, you were my pupil and 'sachiva', you were my minister, Counsellor." The carrying away of such a companion is mourned; there may be or can be no other greater injury and so, there can be no other greater tribute to the role of women-than that paid by Kalidas, even during those days.

In those days when dancing etc.,-was considered to be not very appropriate through Harldas and Ganadas. he has held forth the ideal of education for women and I would only like to remind the people that—though metaphorically—the position of Kalidas has been acknowledged in out country through the verse.

पुरा कवीनां गणना प्रसंगे
कनिष्ठकाधिष्ठित कालिदासः ।
अद्यापि तमुलकवेरभावात्
अनामिका सार्थवती बभूव ॥

There is no poet, according to our" learned people who come on level with Kalidas. They started the firsl count with the small finger which began with Kalidas and there was no-body to be called next and so that finger has been called 'anamika', because none has come up to his level. It is not an insult to the intellect of the present people; present company is always excluded.

SHRI V. K. DHAGE: Including yourself?

DR. SHRIMATI SEETA PARMANAND: I would not like to go the extent about the date *viz.* insisting on 'Ekadasi' as Dr. Kane has , already pointed out; the question of date .should not be material; even if we accept the Ekadasi it would be convenient because November is a convenient time and we have moonlight for celebration in the nights—the rains would have been over—for any. celebrations in the night Kartika would be best. But you can accept any te because it makes no real difference. But any day you may accept; it makes *po* difference. All that is to be *seen* is the idea behind it, and if we to-day, Sir, acoept the idea of hero worship, as Carlyle himself has held in his .essay on Heroes and Hero Worship .and has given his acknowledgment of .heroes as we all know, hero as divinity, prophet, poet, priest and man of letters, among them we can place Kalidas not only as a poet but also as a man of letters. I would ask iGovernment: Supposing there is an (Objection on the part of Government to agreeing to this proposal i on the ground that perhaps later on there may be several other proposals wanting to commemorate other men of letters or other big people, what harm is there in doing so? After all the memorials are not taken away by these people somewhere; they are kept as some sort of useful institution. We are proposing in this particular case that there would be a big library; there would be a theatre and as such it would be a part of the cultural programme of the country. Sir, Government have plenty to spend on the -scores of foreign guests. Government have a lot of money to spend on any -cultural delegation that comes, or to send several of cultural delegations, maybe two or three every year, to other countries, and considering all that, even if it were to be necessary to build memorials once in three or four years or for sometime to come until all communities and all States feel satisfied that all their respective famed men of literature in their own parts have been duly honoured, I do not think Government need feel shy of spending funds on that account. So, Sir, when we are free to-day, on no ground should Government think of these petty reasons of expense which we used to think of for taking up such things as proposed, that the poet belonged to a certain area. In the case of Kalidas even that objection, Sir, cannot be put forth. Sir, I would appeal to Government, as I have heard the idea that Government may not accept this Resolution, that they should show due respect to the opinion expressed in the House and in ordet to really foster the cause of culture which the Central Education Ministry is particularly trying in various ways that it is so anxious to do because that seems to be its only work at present rather than of real education in other important ways .....

MR. CHAIRMAN: No comments, please.

[1]

DR. SHRIMATI SEETA PARMANAND: This remark is on Education Department. It is not a question of criticising the policy as a whole, because I feel that the Central Ministry of Education, as Education is a State subject, is not able to do according to what we think it should do for education in a direct manner. And if what it is doing is to further the cause of culture in various ways, as I said, opening libraries and academies and also giving honours to various modern peeple to-day, it would be doing only something in line with what it is already doing if it were to accept this Resolution. Sir, with these words I would like to request the Government to accept this Resolution and not to hurt the very deeply buried sentiments and also show respect for our culture: I would call Kalidas the father of our culture in certain ways who has fostered our

[Dr. Shrimati Seeta Parmanand.] culture and who has perpetuated the culture for us through his various works. I support this Resolution wholeheartedly.

डा० रघुवीर (मध्य प्रदेश): अध्यक्ष महोदय, कालिदास केवल राष्ट्रीय विभूति नहीं हैं किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय विभूति हैं । मैं यह मानता हूं कि इस सदन के बहुत से सदस्यों ने अपनी आयु में, अपनी किसी न किसी अवस्था में, कालिदास के सम्बन्ध में कुछ न कुछ अवश्य पढ़ा होगा । इसलिए कालिदास के ही सम्बन्ध में बहुत कुछ न कह कर मैं केवल आपका ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहता हूं कि कालिदास का स्थान भारतवर्ष के इतिहास में और संसार के इतिहास में अद्भुत है । कालिदास का प्रभाव हमारे प्रत्येक प्रान्त की भाषा के साहित्य पर पड़ा है । अभी मैं दक्षिण में गया तो वहां मुझे एक पंडित मिले । हम लोग एकट्ठे लंका जा रहे थे तो उन्होंने मलयालम में "उन्नुनीली सन्देश" पढ़ कर सुनाया । "उन्नुनीली सन्देश" कालिदास के मेघदूत के आधार पर ही बनाया गया है । संस्कृत में अनेक काव्य हैं जिन्हें संदेश काव्य अथवा दूत काव्य कहते हैं । इन संदेश काव्यों का सांत कालिदास का मेघदूत ही है । पवनदूत, हंससन्देश, मयूरसन्देश आदि अनेक संदेश हैं । यदि कोई व्यक्ति यह चाहे कि इस पर पूरा ग्रन्थ लिखा जाय कि केवल मेघदूत के कितने रूपान्तर हुये हैं और उससे अनुप्राणित हो कर कितने कवियों ने इस ओर अपना जीवन लगाया है तो वह बहुत अच्छी तरह से लिखा जा सकता है । इतना ही नहीं । मध्यकाल में, मुगल काल में, एक मुस्लिम लेखक अब्दुल रहमान ने एक अद्भुत काव्य लिखा "संदेशरासक" जो कि राजस्थानी में है । उस ग्रंथ की एक कापी मेरे पास है और कभी कभी मैं उसका परिशीलन करता हूं । मैं चाहता हूं कि वह ग्रंथ शीघ्र ही प्रकाशित हो ।

लंका में आज लगभग ३० संदेशकाव्य प्राप्त हैं । ये ग्रंथ मेघदूत के आधार पर सिंघली भाषा में हैं । लंका में मैं जहां जहां गया वहां वहां उनकी पाठशालाओं में, विहारों में, जिसको वे पिरिवेण कहते हैं---कुछ उनमें से प्रसिद्ध हैं और कुछ साधारण हैं---मैंने देखा कि मेघदूत के समान संदेशकाव्य पढ़ाये जाते हैं । इतना ही नहीं, मैंने देखा कि उनके प्राइमरी स्कूलों में भी इसके आधार पर पाठ्यपुस्तकें हैं और बच्चों को संदेशकाव्य पढ़ाये जाते हैं । इस प्रकार से बर्मा में भी संदेशकाव्य हैं जो कि मेघदूत के आधार पर हैं ।

मैंने इंडोनीशिया में कुमारसम्भव का प्रभाव देखा जो कि एक अद्भुत वस्तु थी । बाली द्वीप एक छोटा सा द्वीप है, आपने उसका नाम अवश्य सुना होगा । भारत की अनेक वस्तुएं उस द्वीप में मिलती हैं । जो वस्तुएं हमारे भारत में नहीं हैं वे वहां पाई जाती हैं । कुमारसम्भव के आधार पर वहां एक ग्रंथ है जिसका नाम "समरदहन" है । कुमारसम्भव के एक श्लोक के आधार पर वह बना । श्लोक यह है :

"कृतवानसि विप्रियं न मे
प्रतिकूलं न च ते मया कृतम् ।
किमकारणमेव दर्शनं
विलपन्त्यै रतये न दीयते ॥ "

रति ने अपने पति से, जो कि मर गया है, कहा कि तुम रति को क्यों दर्शन नहीं देते, क्यों उत्तर नहीं देते, मैंने आज क्या आपके प्रति कोई बुराई की है, तुमने मेरी प्रार्थना को कभी अस्वीकार नहीं किया । इस पर अद्भुत चित्र बनाए गए । यह कला कुछ बाली द्वीप में विकसित हुई और कुछ भारतवर्ष से गई । मैं वहां से ३, ४ चित्र ग्रंथ लाया हूं । यदि कोई सज्जन चाहें मेरे यहां आ सकेंगे तो मैं उनको दिखा सकूंगा । इतना ही नहीं, मैं शेक्सपियर, गेटे आदि बड़े बड़े धुरंधर लेखकों और प्रसिद्ध कवियों के कीर्तिस्थानों को देखने के लिये

गया। यह स्वाभाविक बात थी। गेटे के भवन में मैं गया "Frankfurt" में तीन दिन मैंने वहां व्यय किये। तीन दिन तक लगातार मेरे साथ वहां के अध्यक्ष थे। वे मुझ से कहने लगे---आपने आज हमारे गेटे हाउस में आ कर श्रद्धा के फूल गेटे पर चढ़ाये हैं। हमारा भी कर्तव्य है कि हम लोग आपके कवि कालिदास के कीर्ति-स्तम्भ पर, अथवा कीर्ति-मंदिर में, अथवा स्मारक भवन में भी फूल चढ़ायें। मैंने एक आह भरी और चुप रह गया। वह अध्यक्ष गेटे का बड़ा भक्त था। गेटे की भक्ति करते करते उसने गेटे की कुछ पंक्तियां मुझे सुनाई। मेरे में भी शक्ति होती कि मैं उसी ओजस्वी भावना के साथ उन पंक्तियों को सुना सकता। पंक्तियां बड़ी प्रसिद्ध हैं, किन्तु उनकी ओजस्विता आज तक इस देश में कभी अनुभव नहीं की गई। गेटे ने Forster कृत शाकुन्तलम् के जर्मन अनुवाद को पढ़ा। इसको एक या दो बार नहीं पढ़ा किन्तु, मासों तक निरंतर अध्ययन के पश्चात् चार पंक्तियां लिखीं। इन पंक्तियों को गेटे हाउस के इस अध्यक्ष ने पढ़ कर सुनाया :

Willst du die Bluethe des Fruehen,
die Fruechte des spaeteren Jahres.

Willst du was reizt und entzuckt,
Willst du was saettlgt und naehrt,

Willst du den Himmel, die Erde,
mit einem Namen begreifen,

Nenn ich Sakontala dich,
und so ist Alles gesagt.

अर्थात् "जिसमें वसन्त के मधुर रमणीय पुष्प खिले हों, जिसमें ग्रीष्म तथा शरद् के रसीले फूल भरे हों, जो मन को मुग्ध कर दे। जो आत्मा को तृप्त कर दे। जिसमें हृदय लीन हो जावे। जिसमें नक्षत्रपूर्ण आकाश तथा रत्न-गर्भिता वसुन्धरा की परिपूर्णता हो। कहो। वह कौन है। ठहरो मैं बतलाता हूं। सुनो। वह है शकुन्तला, कालिदास की शकुन्तला।" गेटे ने अपने मित्र Johann Goft fried Lud wig Kosegarten से जो उस समय जर्मनी में संस्कृत का एकमात्र विद्वान था, कहा कि भाई मेरे पास बैठा करो। उसने तीन वर्ष उसके साथ व्यतीत किये। गेटे ने उससे कहा कि तुम मुझे मेघदूत का अनुवाद दो, किन्तु मुझे शब्दानुवाद चाहिये भावानुवाद नहीं चाहिये। मैं भारतवर्ष की, कालिदास की, आत्मा में प्रवेश करना चाहता हूं। इस लिये मुझे शब्दानुवाद दो। एक एक शब्द का, धातु, प्रत्यय और उपसर्ग का अलग अलग अनुवाद दो। यदि गेटे संस्कृत जानता तो क्या कुछ न करता। किन्तु न जानते हुये भी उसने एक काम अवश्य किया। वह कवि था, अद्भुत कवि था। वह कालिदास पर मुग्ध हुआ। उसके जीवन का सब से बड़ा ग्रंथ था "Faust" जिसको लिखने में उसने ६३ वर्ष लगाये। इस ग्रन्थ की प्रस्तावना उसने शाकुन्तलम् के आधार पर बनाई। सूत्रधार, कवि तथा विदूषक रंगमंच पर आते हैं और वादविवाद करते हैं कि जनता हमारा नाटक देखने के लिये जो इकट्ठी हुई हैं उसका हम किस प्रकार से मनोरंजन कर सकते हैं।

भारतीय शासन प्रचार में लाखों रुपया लगाता है और लगाना चाहिये। हम चाहते हैं कि संसार हमको जाने, हम चाहते हैं कि हमारा देश हमको जाने, हम अपने आपको जानें। उपनिषद् का वाक्य है "आत्मानं विद्धि" अपने आप को जानो, हमारा अपना क्या है, कहना बड़ा कठिन है। सारी आयु इसका अध्ययन करते रहे। किन्तु, फिर भी यह नहीं जान पाते कि मेरी आत्मा क्या है, मेरे देश की आत्मा क्या है। फिर भी कुछ लेशमात्र भी तो जानें। लाखों करोड़ों रुपया शासन का व्यय होता है, जनता का व्यय होता है, व्यक्तियों का व्यय होता है, समय व्यय होता है, किन्तु हम जो प्रचार करते हैं, उस प्रचार में जो उद्देश्य हैं, क्या वह पूरा होता है ? सदा पूरा नहीं होता। अधिकांश प्रचार साहित्य रद्दी की टोकरी में

[डा० रघुवीर]

फैंक दिया जाता हैं । किन्तु, कालिदास ऐसा व्यक्ति हैं जो कि रद्दी की टोकरी में कभी नहीं फैंका जायगा । जो जनता के, विद्वानों के, साधारण नरनारियों के हृदय में प्रवेश करेगा और उनके मस्तिष्क में स्थान बनायेगा ।

अभी मेरे एक मित्र भारतवर्ष में जापान से आये हुये हैं । उनके आने का एकमात्र उद्देश्य हैं कि कालिदास के दो ग्रन्थों का अनुवाद कर पायें । वह दो वर्ष से यहां ठहरे हुये हैं और दो वर्ष और ठहरने का विचार हैं । उनका उद्देश्य यही हैं, कि वह कालिदास के दो एक ग्रंथों का जापानी भाषा में अनुवाद कर सकें । इसकी आवश्यकता चारों ओर हैं । हमारा साहित्य आज संसार में अच्छी प्रकार से लोग नहीं जानते किन्तु उनकी इच्छा साहित्य जानने की बहुत अधिक हैं ।

कालिदास का "कीर्ति मंदिर" होना चाहिये । लोग मंदिर कहने से घबड़ाते हैं । घबड़ाने की कोई बात नहीं हैं, हम फूल चढ़ायेंगे, क्यों नहीं चढ़ायेंगे, श्रद्धा और भक्ति से चढ़ायेंगे । किन्तु इसका अर्थ यह नहीं हैं कि हम उनकी मूर्खताओं को भी मानते हैं, उनके वाक्य वाक्य को प्रमाण मानते हैं । यदि यूरोपियन उनको श्रद्धा के फूल चढ़ाने को उद्यत हैं तो हमें चढ़ाने में कोई लज्जा नहीं हैं । अंग्रेजी में "Temple का कोई भी अर्थ हो किन्तु यदि भारतीय भाषा में हम कहें कि कालिदास का कीर्ति मंदिर बनायेंगे, तो यह अपनी भाषा का शब्द हैं । मंदिर का किसी विशेष सम्प्रदाय के साथ सम्बन्ध नहीं हैं । "मंदिर" शब्द की अपेक्षा और कोई दूसरा सुन्दर शब्द मुझे तो आज पता नहीं । यदि यहां किसी सज्जन को पता हो तो वह अवश्य बतलायें ।

यदि हमारे शासन में कुछ झिझक हैं इस कीर्ति मंदिर की सहायता करने के लिये, इस की स्थापना में रुपया देने के लिये, अपना नाम देने के लिये, तो ठीक बात नहीं हैं । मैंने यत्न किया तो पता लगा कि शासन सहायता करने को उद्यत हैं किन्तु सारा भार अपने ऊपर लेने को उद्यत नहीं हैं । सारा भार शासन अपने कंधे के ऊपर नहीं लेता तो जनता इस काम को करे । संभव हैं मेरी सूचना अशुद्ध हो । जनता यदि इस काम को करे तो शासन उस की सहायता करेगा । जिस प्रकार इंग्लैंड में, जर्मनी में, फ्रांस में, जापान में, चीन में और अन्य स्थानों में शासन सहायता करता हैं किन्तु कार्य जनता करती हैं ।

अभी एक सज्जन मेरे पास आये और यहां आ कर कहने लगे कि "न प्रभातरलं ज्योतिरुदेति वसुधातलात्" वसु अर्थात् धन धान्य के गर्व से फूली भूमि से प्रभा चंचल ज्योति का उदय नहीं हुआ करता । यह भी ठीक बात हैं कि जिन लोगों ने स्वयं कालिदास का रसास्वादन नहीं किया उनसे आप यह आशा करें कि वे इस काम में अग्रसर होंगे, यह बुद्धिमत्ता नहीं । इस लिये हमारा कर्तव्य हैं कि शासन की ओर न देखते हुये हम लोग जनता की ओर से इसका प्रारम्भ करें । हम यहां दो सौ और पांच सौ, अर्थात् सात सौ संसद् सदस्य बैठे हुये हैं । इनमें से यदि दो चार संसद् सदस्य भी इस काम को अपने हाथ में उठा लें तो मैं समझता हूं कि यह कार्य सफल हो सकता हैं ।

कालिदास का कीर्ति मंदिर, कालिदास का स्मारक भवन, ताजमहल से भी बढ़ कर हो और उससे भी अधिक वैभवशाली हो । ताजमहल एक पति और पत्नी के शुद्ध प्रेम का द्योतक हैं । सारे संसार की कला की कल्पना और देश की कला को शिखर पर पहुंचाने वाले कालिदास के लिये जो कीर्ति स्तम्भ होगा, जो कीर्ति मंदिर होगा, ताजमहल से विशाल होना चाहिये । उसमें कालिदास की आत्मा का प्रतिबिम्बन होना चाहिये ।

दूसरा दृष्टिकोण यह भी हैं कि यह मंदिर पत्थरों का क्यों बनाया जाय, केवल झील हो, जहां हंस खेल रहे हों, वाटिकायें हों, जहां प्रत्येक ऋतु के फूल खिले हों । कालिदास

का आदर्श ग्रीक साहित्यिकों के आदर्श से भिन्न था। ग्रीक साहित्यिकों का आदर्श इंद्रियों के भोग और इंद्रियों के रसों को लेना था किन्तु कालिदास के काम में जहां इंद्रियों का रंजन था वहां साथ साथ इंद्रियों के ऊपर उठना भी था। भोग और त्याग इन दोनों का अद्भुत संमिश्रण कालिदास में हुआ हैं। इस लिये चाहे हम वैभवशाली मंदिर बनायें, चाहे हम केवल झीलें, जंगल और वाटिकायें ही बनायें किन्तु कालिदास की स्मृति अदश्य होनी चाहिये। आज शासन किसी कारण से समर्थ हो अथवा असमर्थ हो।

एक बात मुझे अंत में स्मरण आती हैं, ध्यान में आती हैं। राजे गये, महाराजे गये, जमींदार गये और आज व्यापारी कहते हैं कि हमारे पास पैसा नहीं हैं, गवर्नमेंट भी चाहती हैं कि हम डेफीसिट फाइनेंसिंग करते रहें, हीनार्थ प्रबन्धन करते रहें। और जितना रुपया भी जनता में फैला हो उसे कर द्वारा लेलें नहीं तो जनता में अधिक रुपया हो जायेगा और रुपये का मूल्य पैसा हो जायेगा। यदि धनियों के पास धन न हो तो कालिदास की स्मृति के लिये धन कहां से आयेगा। जैसे जैसे शासन समाजवाद की ओर अधिक पांव बढ़ाता जायेगा वैसे वैसे शासन का कर्तव्य और उत्तरदायित्व अधिक से अधिक बढ़ता जायेगा। मैं समझता हूं कि यही समय हैं जब जनता इसको अपने हाथ में ले सकती हैं। यदि जनता ने इस कीर्ति मंदिर को बनाने का काम अब अपने हाथ में नहीं लिया तो आगे चल कर आप देखेंगे कि एक ही संस्था रह जायेगी और वह शासन जिसको कि सब कुछ करना होगा। लोगों को रोटी खिलाना, प्रति दिन का काम देना, प्रति दिन लोगों को ६ घंटे, ७ घंटे और ८ घंटे काम करने के लिये देना जब शासन के कर्त्तव्य होंगे तब जनता को बौद्धिक जीवन कहां से मिलेगा, क्या बौद्धिक जीवन देना शासन का काम नहीं होगा।

डा० रघुवीर सिंह (मध्य भारत): माननीय अध्यक्ष महोदय, महाकवि कालिदास के विषय में बहुत कुछ कहा जा चुका हैं, परन्तु इस सम्बन्ध में मैं एक बात की ओर खास तौर से शासन का ध्यान दिलाना चाहता हूं।

अंगरेजी के महा सुप्रसिद्ध इतिहासकार और लेखक टॉमस कार्लाइल से एक बार पूछा गया कि अगर तुम्हें दो बातों में से एक चीज चुनने के वास्ते कहा जाय तो तुम क्या करोगे ? अगर तुमसे पूछा जाय कि एक ओर सारा अंगरेजी साम्राज्य हो और दूसरी ओर शेक्सपियर हो तो तुम क्या चुनोगे ? कार्लाइल ने उत्तर दिया कि मुझे अंगरेजी साम्राज्य की कोई पर्वाह नहीं, चाहे वह नष्ट हो जाय। शेक्सपियर बना रहेगा तो साम्राज्य या हमारा उत्थान फिर से हो सकता हैं। यही कारण हैं कि हम आज इस बात की मांग कर रहे हैं कि शासन कालिदास के स्मारक के लिए कुछ करें। आज सब कोई इस बात की मांग करते हैं कि हम को रोटी चाहिए, शासन भी उसके लिए समुत्सुक हैं। आज अगर हम ने समाजवादी शासन की स्थापना का निश्चय किया हैं तो हम इस बात के वास्ते प्रयत्नशील हैं कि हर व्यक्ति को उसमें भोजन मिलना चाहिए, हर व्यक्ति का जीवन सुखमय होना चाहिए। परन्तु क्या कभी शासन यह भी सोचता हैं कि पेट के भोजन की अपेक्षा मस्तिष्क का भोजन कहीं आवश्यक हैं ? आदमी कई एक दिनों तक भूखा रह सकता हैं, प्यासा रह सकता हैं, परन्तु एक मिनट भर के लिए भी उसका मस्तिष्क खाली नहीं रह सकता हैं। इसी वास्ते अगर आज हम शासन से मांग करते हैं कि वह इस प्रश्न की तरफ देखे तो हम सिर्फ मानसिक भोजन की मांग करते हैं। मैं यह चाहता हूं कि शासन इसके वास्ते कुछ प्रयत्नशील हो, कुछ प्रेरणा दे, कुछ नेतृत्व करे। सम्भव हैं शासन यह भी कहे कि यह काम जनसाधारण का हैं, तो मैं सिर्फ एक बात पूछता हूं। हमारा शासन क्या हैं, वह एक जनतंत्रीय शासन हैं। शासन आज जनसाधारण से भिन्न नहीं हैं, शासन जनसाधारण का एक अंग मात्र हैं और इसी कारण शासन के वास्ते यह बाध्य हो जाता हैं कि उसके लिए अत्यावश्यक नेतृत्व दे।

[डा० रघुवीर सिंह]

एक और बात मैं शासन को सुझाना चाहता हूं। बहुत समय नहीं बीता है जब अफगानिस्तान ने फिरदौसी की हजारहवीं शताब्दी मनाई। फिरदौसी उस युग का कवि था जब अफगानिस्तान में इस्लाम धर्म का प्रचार नहीं हुआ था। उसका "शाहनामा" एक अमर कृति है, परन्तु फिर भी अफगानिस्तान में शासन और जनसाधारण ने मिल कर उसकी शताब्दी मनायी, उन्होंने अपने यहां अलबेरुनी का भी स्मारक बनाया है। जब हम रूस की तरफ देखते हैं तो अभी कुछ ही युगों की बात है, उस देश ने अपने महान् साहित्यकार गोर्की का जो आदर किया, उसके वास्ते जो कुछ भी किया वह भी आज देखने और जानने की चीज है। तब क्या हमारे लिए यह आवश्यक नहीं हो जाता है कि हम कालिदास का कोई न कोई स्मारक बनायें। कुछ साहित्यकारों ने, कुछ सज्जनों ने यह प्रश्न उठाया था कि कालिदास कौन था, कब हुआ, इसका तो हमें स्मरण नहीं है। परन्तु उन्हें मुझे सिर्फ यही याद दिलानी है कि कार्लाइल भी शेक्सपियर सम्बन्धी ऐसी ही समस्या से किसी प्रकार अनभिज्ञ नहीं था। शेक्सपियर के बारे में भी वही उलझन है कि शेक्सपियर के ये सारे नाटक किसने लिखे। कोई कहता है बेकन ने लिखे हैं, कोई कहता है कि सचमुच शेक्सपियर नाम का व्यक्ति था जिसने ये लिखे थे। कोई यह भी कहता है कि किसी सर्वथा विभिन्न अज्ञात व्यक्ति ने ही इन्हें लिखा था, और उसने शेक्सपियर का उप नाम रखकर ये नाटक प्रकाशित किए और यह बाद में ज्ञात हुआ कि शेक्सपियर नाम का कोई वास्तविक व्यक्ति भी था। इस लिए यदि ४०० वर्ष पुराने एक महाकवि, और विशेषतः ऐसे ऐतिहासिक काल के एक लेखक के बारे में इतनी विभिन्न धारणाएं हैं तो कालिदास के समान बहुत पुराने कवि के बारे में कोई विभिन्न धारणाएं हों तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। मगर हमारे सामने मुख्य वस्तु है वह उसका साहित्य ही है। यदि हम उसका स्मारक बनाना चाहते हैं तो केवल इसी कारण कि उसका साहित्य ऐसा था कि वह संसार के लिए सर्वथा अपूर्व था और इसी प्रकार यों हम साहित्य की सेवा करेंगे। हम व्यक्ति की पूजा नहीं करते हैं। साहित्य की साधना के वास्ते ही हम यह चाहते हैं कि उस साहित्य साधना के लिए एक उपयुक्त स्थान हो, एक स्मारक हो और उसी स्मारक के लिए आज यह मांग की जा रही है। उसके स्मृति दिवस के लिये अगर कोई एक दिन निश्चित् किये जाने के बारे में सुझाव दिया गया है तो वह सुझाव सिर्फ इस वास्ते है कि वह दिन सिर्फ किसी खास कारण से नहीं किन्तु एक विशिष्ट दिन स्थिर करने के इरादे से ही उसका सुझाव दिया गया है। अगर किसी कारणवश या बहुमत से ऐसा भी खयाल किया जाय कि कोई दूसरा दिन निश्चित किया जाय तो मेरा विश्वास है कि प्रस्तावक महोदय को उसमें कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। मुझे तो केवल यही बात कहनी है कि कालिदास के स्मारक के लिए शासन को कुछ प्रेरणा देनी चाहिए और साथ ही आवश्यक नेतृत्व भी करना चाहिए। धन्यवाद।

شری احمد سعید خاں(اتر پردیش): حضوروالا - اس ریزولیشن کی سپرٹ سے مجھے بالکل اتفاق ھے - میں یہ مانتا ھوں کہ جو قوم اپنے ھیروز کو، اپنے بڑے بڑے لوگوں کو یاد نہیں رکھ سکتی، انہیں بھول جاتی ھے اور انکی عزت نہیں کرتی وہ آیندہ بڑے لوگ اور بڑے ھیروز پیدا نہیں کر سکے گی - ان لوگوں کی یاد رکھنے انکی یاد کو لوگوں کے دلوں میں تازہ رکھنے کا مقصد نہ صرف یہ ہے کہ ہم انکی عزت کر رھے ھیں بلکہ اصلی مقصد یہ ھے کہ ہم اپنے نوجوانوں میں یہ روح پیدا کر رھے ھیں کہ آئندہ بھی ایسے لوگ ھمارے یہاں

ایک اور چیز بھی میں عرض کر دوں - آجکل کچھ اسکا بھی رواج چل گیا ھے کہ پہلے لوگوں نےکوئی چیز، کوئی عمارت کوئی آرگنایزیشن یا کوئی انسٹی ٹیوشن کسی شخص کے نام سے بنایا - اس زمانہ میں وہ اسے پسند کرتے تھے، وہ اسکو محبوب رکھتے تھے - اس شخص کے نام سے انہوں نے کوئی عمارت یا لائبریری یا یتیم خانہ بنا دیا - آج نہ وہ زندہ ھے جسکے نام سے بنایا گیا تھا اور نہ وہ زندہ ھیں جنھوں نے روپیہ جمع کرکے بنایا تھا -

[MR. DEPUTY CHAIRMAN in the Chair]

میں نے ھندوستان کے اندر یہ دیکھا ھے کہ جس آدمی کے نام میں چندہ کیا جاتا ھے اسکا نام بدل کر چندہ کرنے والے اپنی پسند کا نام رکھ لیتے ھیں - میں سمجھتا ھوں کہ یہ طریقہ کسی کی یاد کو تازہ رکھنے کے لئے مناسب طریقہ نہیں ھے - اس بات کے متعلق میرا کہنا یہ ھے کہ جو لوگ یاد تازہ رکھنے کے لئے کوئی تجویز پیش کرتے ھیں انہیں اس کام کے لئے کچھ قربانی کرنی چاھیئے - کچھ روپیہ اس کے لئے جمع کرنا چاھیئے، کچھ محنت کرنی چاھیئے تب ھی یاد تازہ رہ سکتی ھے - کسی آدمی نے کوئی اچھا کام کیا ھو کچھ دوسرے لوگ اسکے نام پر چندہ کر کے پیسہ جمع کریں اور دوسرے کام میں لگا دیں تو یہ بات اخلاقاً مناسب معلوم نہیں ھوتی - اس طرح سے روپیہ جمع کرنا جسکے لئے کچھ محنت نہ پیدا ھو سکیں - لہذا جس ارادہ سے اور جس نیت سے یہ ریزولیشن پیش کیا گیا ھے مجھے اس سے اتفاق ھے - البتہ یہ میں ضرور عرض کروں گا کہ اسطرح کے کام زیادہ تر خود سماج کو کرنے چاھیئیں - ابھی ڈاکٹر رگھوبیر سنگھ نے جو باتیں اپنی تقریر میں کہی ھیں ان کے ایک ایک لفظ سے مجھے اتفاق ھے کہ اس طرح کے کام لوگوں کو اپنے ھاتھ میں لینے چاھئیں - پہلے روپیہ جمع کرنا چاھیئے پھر گورنمنٹ سے عرض کرنا چاھیئے اور گورنمنٹ بھی اس میں مدد کریگی - لیکن ھم کبتک ھر کام گورنمنٹ کے اوپر ھی چھوڑتے رھیں گے ؟ یہ سچ ھے کہ گورنمنٹ کے پاس روپیہ بہت ھے مگر گورنمنٹ کے پاس اخراجات بھی تو بہت ھیں - ابھی ھمارے سامنے پانچسالہ آیندہ اسکیم آ چکی ھے اور ھم دیکھ چکے ھیں کہ ھماری گورنمنٹ ڈیفیسٹ بجٹ بن کر رھی ھے - تو ان حالات میں ھر چیز کو گورنمنٹ ھی کے ذمہ ڈالنا یہ بات زیادہ صحیح نہیں معلوم ھوتی - میں سمجھتا ھوں کہ اگر وہ لوگ جو اس ریزولیوشن کے طرفدار ھیں ایک ایسا آرگنائزیشن، ایک ایسی تنظیم کریں کہ جس میں اس کام کے لئے روپیہ جمع کیا جا سکے تو یقیناً گورنمنٹ خوشی سے اس کی مدد کریگی - اور اس کی مدد کے بعد وہ کام ھو جائے گا -

[شری احمد سعید خاں]

کی گئی ہو اچھی چیز نہیں ہے - دوسرے کا نام بدل کر اپنا نام کرنا یہ درست چیز نہیں ہے - میں تو یہی کہوں گا کہ کام وہی درست ہوتا ہے وہی حاصل کرنے کے لائق چیز ہوتی ہے جسکے لئے محنت کی گئی ہو قربانی کی گئی ہو - محنت کی چیز حاصل کرنے کے لئے ایسا کرنا اخلاقی طور پر مناسب نہیں ہے - بہر حال میں اس ریزولیوشن کی سپرٹ سے اتفاق کرتا ہوں اور امید کرتا ہوں کہ جس مقصد کو حاصل کرنے کے لئے آرگنائیزیشن بنانے کی درخواست ہے گورنمنٹ اسکی مدد کریگی -

†[श्री अहमद सईद खां (उत्तर प्रदेश): हुजूर-वाला, इस रिजोल्यूशन की स्पिरट से मुझे बिल्कुल इत्तिफाक हैं। मैं यह मानता हूं कि जो कौम अपने हीरोज को, अपने बड़े बड़े लोगों को, याद नहीं रख सकती, उन्हें भूल जाती हैं और उनकी इज्जत नहीं करती वह आइंदा बड़े लोग और बड़े हीरोज पैदा नहीं कर सकेगी। उन लोगों की याद रखने, उनकी याद को लोगों के दिलों में ताजा रखने का मकसद न सिर्फ यह हैं कि हम उन की इज्जत कर रहे हैं बल्कि असली मकसद यह हैं कि हम अपने नौजवानों में वह रूह पैदा कर रहे हैं कि आइंदा भी ऐसे लोग हमारे यहां पैदा हो सकें। लिहाजा जिस इरादे से और जिस नीयत से यह रिजोल्यूशन पेश किया गया हैं मुझे उस से इत्तिफाक हैं। अलबत्ता यह मैं जरूर अर्ज करूंगा कि इस तरह के काम ज्यादातर खुद समाज को करने चाहियें। अभी डाक्टर रघुबीर सिंह ने जो बातें अपनी तकरीर में कहीं हैं उनके एक एक लफ्ज से मुझे इत्तिफाक हैं कि इस तरह के काम लोगों को अपने हाथ में लेने चाहियें। पहले रुपया जमा करना चाहिये फिर गवर्नमेंट से अर्ज करना चाहिये और गवर्नमेंट भी उसमें मदद करेगी। लेकिन हम कब तक हर काम गवर्नमेंट के ऊपर ही छोड़ते रहेंगे? यह सच हैं कि गवर्नमेंट के पास रुपया बहुत हैं मगर गवर्नमेन्ट के पास एखराजात भी तो बहुत हैं। अभी हमारे सामने पंचसाला आइन्दा स्कीम आ चुकी हैं और हम देख चुके हैं कि हमारी गवर्नमेंट डेफीसिट बजट रन कर रही हैं। तो इन हालात में हर चीज को गवर्नमेन्ट ही के जिम्मे डालना यह बात ज्यादा सही नहीं मालूम होती। मैं समझता हूं कि अगर वह लोग जो इस रिजोल्यूशन के तरफदार हैं एक ऐसा आरगेनाइजेशन, एक ऐसी तनजीम करें कि जिस में इस काम के लिये रुपया जमा किया जा सके, तो यकीनन गवर्नमेंट खुशी से उसकी मदद करेगी और उसकी मदद के बाद वह काम हो जायेगा।

एक और चीज भी मैं अर्ज कर दूं। आज कल कुछ इसका भी रिवाज चल गया हैं कि पहले लोगों ने कोई चीज, कोई इमारत, कोई आरगेनाईजेशन या कोई इन्स्टीट्यूशन किसी शख्स के नाम से बनाया। उस जमाने में वह उसे पसन्द करते थे, वह उसको महबूब रखते थे। उस शख्स के नाम से उन्होंने कोई इमारत या लायब्रेरी या यतीमखाना बना दिया। आज न वह जिन्दा हैं जिसके नाम से बनाया गया था और न वह जिन्दा हैं जिन्होंने रुपया जमा करके बनाया था।

[MR. DEPUTY CHAIRMAN in the Chair]

मैंने हिन्दुस्तान के अन्दर यह देखा हैं कि जिस आदमी के नाम से चन्दा किया जाता हैं उसका नाम बदल कर चन्दा करने वाले अपने पसन्द का नाम रख लेते हैं। मैं समझता हूं कि यह तरीका किसी की याद को ताजा रखने के लिये मुनासिब तरीका नहीं हैं। इस बात के मुताल्लिक मेरा कहना यह हैं कि जो लोग याद ताजा रखने के लिये कोई तजवीज पेश करते हैं उन्हें इस काम के लिये कुछ कुर्बानी करनी चाहिये, कुछ रुपया

†Transliteration in Devanagari script.

उसके लिये जमा करना चाहिये, कुछ मेहनत करनी चाहिये तब ही याद ताजा रह सकती है। किसी आदमी ने कोई अच्छा काम किया हो कुछ दूसरे लोग उसके नाम पर चन्दा कर के पैसा जमा करें और दूसरे काम में लगा दें तो यह बात इखलाकन मुनासिब मालूम नहीं होती। इस तरह से रुपया जमा करना जिसके लिये कुछ मेहनत न की गई हो अच्छी चीज नहीं है। दूसरे का नाम बदल कर अपना नाम करना यह दुरुस्त चीज नहीं है। मैं तो यही कहूंगा कि काम वही दुरुस्त होता है, वही हासिल करने के लायक चीज होती है जिसके लिये मेहनत की गई हो। मुफ्त की चीज हासिल करने के लिये ऐसा करना इखलाकी तौर पर मुनासिब नहीं है। बहरहाल मैं इस रिजोल्यूशन की स्पिरट से इत्तिफाक करता हूं और उम्मीद करता हूं कि जिस मकसद को हासिल करने के लिये आरगेनाईजेशन बनाने की दरख्वास्त है गवर्नमेन्ट उसकी मदद करेगी।]

श्री कन्हैयालाल डी० वैद्य (मध्य भारत): उपसभापति महोदय, मैं इस प्रस्ताव का हृदय से समर्थन करता हूं। माननीय नवाब साहब ने अभी अभी जो विचित्र बात कही, उसके बारे में मुझे इतना ही कहना है कि इतिहास इस बात का साक्षी है कि कालिदास का वह विक्रम युग जिसने इस देश में गणतंत्र की स्थापना की थी, जिसने गणराज्य और जन राज्य का जयघोष इस देश में किया था, उस के यादगार दिवस मनाने और कीर्तिमंदिर की स्थापना के लिए यह कहा जाय कि हम कुर्बानी करें, अच्छी बात मालूम नहीं होती। आज हम स्वतंत्र हो गये हैं अगर हमने इस महान कवि के बारे में कुछ नहीं किया तो यह एक सोचने की बात होगी।

अभी नवाब साहब ने जो यह फरमाया कि हमें कुर्बानी करनी चाहिये तो कौन नहीं जानता कि इस देश की जनता ने गणराज्य की स्थापना के पूर्व कुर्बानी नहीं की? अगर हमारे देशवासियों ने कुर्बानी नहीं की होती तो आज हमारे देश में गणराज्य की स्थापना नहीं हो सकती थी। जब हमारे देशवासियों ने कुर्बानी की तब आज हम यह दिन देख रहे हैं। कुर्बानी करने के ही बाद हमने "अशोक चक्र चिन्ह" को राज्य का स्तम्भचिह्न बनाया है। आज हम स्वतंत्र हो गये हैं तो अब यह हमारा कर्तव्य हो जाता है कि जिस महाकवि कालिदास ने हमें गणराज्य में साहित्य की और कला की प्रेरणा दी थी, जिस की प्रेरणा से आज भी हम अपने देश में प्राचीन संस्कृति स्थापित कर सकते हैं, अगर उनके सम्मान में कोई स्मारक नहीं बनायेंगे, तो यह हमारे लिए लज्जा की ही बात होगी। अभी हमारे मित्र डा० रघुवीर ने जिस प्रकार के उद्धरण सदन के सामने रखे, उस प्रकार के उद्धरण के बीच में पड़कर मैं समय नष्ट करना नहीं चाहता हूं। मैं तो इतना ही कहना चाहता हूं कि यह हमारा दुर्भाग्य है कि निरंकुश शासन काल में हमारी जितनी भी प्राचीन कला, साहित्य और दूसरी चीजें थीं वे नष्ट भ्रष्ट हो गईं। उस जमाने के शासकों ने हमारे इतिहास को नष्ट करने के लिए कोई कसर नहीं उठा रखी। अब हमारा देश स्वतंत्र हो गया है और अब हमारी सरकार और जनता का यह कर्तव्य हो जाता है कि हम अपने पुराने इतिहास की अच्छाइयों को फिर से पुनर्जीवित करें।

आज से तीन वर्ष पूर्व, उज्जैन में राष्ट्रपति जी ने विक्रम कीर्ति मंदिर का शिलान्यास किया था, उस समय उनके मुंह से जो शब्द निकले थे वे याद करने योग्य हैं। उन्होंने कहा था कि हमें अपने देश के प्राचीन कवियों, लेखकों और महापुरुषों को महत्व देना चाहिये। जब हमारे प्रधान मंत्री जी ने मध्य भारत का दौरा किया था तो उन्होंने भी सार्वजनिक रूप में यह कहा था कि मध्य भारत में उज्जैन संस्कृति तथा शिक्षण का पुराने समय से केन्द्र रहा है और हमें स्वतंत्र भारत में भी उज्जैन को संस्कृति तथा शिक्षण के एक महान केन्द्र के रूप में बनाना होगा। तब मैं

[श्री कन्हैयालाल डी० वैद्य]

यह विश्वास करता हूं कि हमारी सरकार इस बात के लिए कटिबद्ध होगी कि जहां वह करोड़ों रुपया दूसरे कार्यों पर खर्च कर रही हैं अगर थोड़ा सा धन इस महान पुरुष की स्मृति में खर्च कर देगी तो कोई खास बात नहीं होगी। हमें अपने महापुरुषों के जन्मस्थान की जीवित स्मृतियों को जिसके अन्दर उन्होंने साहित्य का सृजन किया हैं फिर से पुनर्जीवित करना होगा तथा इसके लिए सरकार और जनता दोनों को पूरी तरह से कोशिश करनी होगी। प्रधान मंत्री जी के शब्दों में इस देश के अन्दर संसार की प्राचीन शिक्षा और संस्कृति का केन्द्र हैं और संसार की संस्कृति के योग्य स्थान अगर कोई केन्द्र हो सकता हैं तो वह मध्य भारत में उज्जैन ही हो सकता हैं। तो मैं यहां पर सरकार से फिर प्रार्थना करता हूं कि जिस चीज का हमारे राष्ट्रपति ने स्वागत किया था उसकी पूर्ति जल्द से जल्द होनी चाहिये। किन्तु मुझे दुःख के साथ कहना पड़ता हैं कि इस ओर अभी तक कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा हैं। जिस चीज का राष्ट्रपति द्वारा उद्घाटन किया गया उसमें धूल पड़ी रहे, यह हमारे लिए लज्जा की बात हैं। अवन्ती (उज्जैन), जिसका एक गर्वमय इतिहास हैं, जिस पवित्र क्षिप्रा नदी के स्थान पर जहां महाकवि कालिदास ने महान ग्रन्थों की रचना की थी, जिस जगह से हमें गणराज्य और जनराज्य की प्रेरणा मिलती थी, जिस महापुरुष की रचनाओं का इतिहास में महत्व हैं, आज हम उसका कोई स्मृति चिन्ह नहीं पाते हैं। आज हमें उस युग के उस महापुरुष का कोई स्थान, कोई यादगार नहीं मिलती हैं जिससे कि हम प्रेरणा ले सकें। अगर हमने उस महापुरुष के लिए स्वतंत्र राष्ट्र होने के नाते आज भी कुछ नहीं किया तो यह हमारे लिए एक लज्जा की बात होगी और दुनिया वाले भी हम से यही कहेंगे कि हम अपने महापुरुषों का सम्मान करना नहीं जानते हैं। जिस तरह से दूसरे देशों में महापुरुषों का सम्मान किया जाता हैं, उसी तरह से हमारे देश में भी इस तरह का कदम उठाया जाना चाहिये। मुझे पूर्ण आशा हैं कि हमारी सरकार अवश्य इस प्रस्ताव को कार्यान्वित करने के लिए जल्द से जल्द कदम उठायेगी। हमारा शिक्षा मंत्रालय भी राष्ट्रपति जी और प्रधान मंत्री जी की बातों की ओर ध्यान देगा जो कि उन्होंने इस विषय के सम्बन्ध में कही थीं।

अब मैं स्मारक दिवस के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहता हूं। इस विषय में सदन के अन्दर कुछ मतभेद हैं किन्तु मेरा कहना यह हैं कि इस महापुरुष के "दिवस" के विषय में हमें इस तरह से झगड़ना नहीं चाहिये। इस दिवस के सम्बन्ध में एक समिति बनाई जानी चाहिये जो इसके इतिहास और दूसरी बातों को देखकर इस दिवस को निश्चित कर सकती हैं। जहां तक मेरा सम्बन्ध हैं मेरे विचार में यह दिवस कार्तिका के नवें वर्ष के प्रथम दिवस से प्रारम्भ होना चाहिये। किन्तु फिर भी मेरा यह कहना हैं इस बारे में कोई समिति नियुक्त की जानी चाहिये जो इस सम्बन्ध में निर्णय करे और मुझे आशा हैं कि सरकार भी उसके आधार पर निश्चित रूप से दिवस मनाने को कदम उठायेगी।

आज हमारा देश स्वतंत्र हो गया हैं, जनता में यह भावना बढ़ती जा रही हैं कि हमारे जितने भी पुराने महापुरुष हैं उनकी स्मृति में हमें कुछ न कुछ करना चाहिये। अगर हमने ऐसा नहीं किया तो हमारे महापुरुषों ने जो महान कृतियां बनाई हैं, जो हमारे लिए एक पवित्र देन हैं, जिसके द्वारा हमने अपने को स्वतंत्र किया हैं, हमेशा के लिए लुप्त हो जायेंगी। इसलिए हमारी सरकार का यह परम कर्त्तव्य हो जाता हैं कि देश के महापुरुषों के बारे में, उनकी कृतियों के बारे में, जो कुछ भी हम कर सकते हैं करें।

अन्त में मुझे फिर यह कहना हैं कि तीन वर्ष हुए राष्ट्रपति जी ने मध्य भारत में जिस विक्रम

कीर्ति मंदिर के निर्माण के लिए शिलान्यास किया था, उसके भवन का निर्माण तीन साल गुजरने के बाद भी नहीं हुआ : यह हम सब लोगों के लिए एक लज्जा की बात है । उस मंदिर के लिए हमने धन भी एकत्र किया था और उसकी शुरूआत भी कर दी थी किन्तु अभी तक निर्माण कार्य ही प्रारम्भ नहीं हो सका । जिस चीज का राष्ट्रपति द्वारा शिलान्यास हुआ हो, उसको पूरा न किया जाय, यह हमारे राष्ट्र के लिए लज्जा की बात है । विदेशी राज्य में अगर किसी गवर्नर जनरल ने ऐसा शिलान्यास किया होता तो वह इस दशा में इतने लम्बे समय तक नहीं रहता । यह राष्ट्रपति जी की प्रतिष्ठा, राष्ट्रपति की सत्ता और सारे देश की जनता की इज्जत का प्रश्न है । इस चीज को मैं बड़े अदब के साथ माननीय मंत्री महोदय के ध्यान में लाना चाहता हूं कि इस प्रकार की स्थिति का निर्माण नहीं हो । इस प्रस्ताव पर एक रूप से सदन में वादविवाद तो हो गया लेकिन कहीं ऐसा न हो कि इसकी स्याही सूखने पर यह प्रस्ताव पड़ा रहे और बाद में इस पर कोई ध्यान न दिया जाय । एक गणतंत्र राज्य के लिये यह कोई अच्छी बात नहीं होगी । मैं आशा करता हूं कि इसके लिये आवश्यक और वास्तविक कदम उठाये जायेंगे क्योंकि भारत के लिये यह बड़ा आवश्यक है कि ऐसे महापुरुषों के कीर्ति मंदिरों की स्थापना की जाय क्योंकि उन्होंने एक ऐसे साहित्य का निर्माण किया जिससे कि हमारा गौरव बढ़ा । इन शब्दों के साथ मैं प्रस्ताव का समर्थन करता हूं ।

12 NOON

SHRIMATI RUKMINI ARUNDALE (Nominated): Mr. Deputy Chairman, I am not a Sanskrit scholar but I am one of those who feel that learning in the Sanskrit language is a vital necessity in our country. I know from my experience in art that without the study of Sanskrit, it is not possible to understand Indian culture, nor is it possible to - understand any particular subject in art like music or dance, and therefore Sanskrit is ol very great necessity in our lives, and any stimulus given to Sanskrit will help to bring Indian culture forward in our country and before all nations. So from that point of view, the study of Kalidasa and every encouragement given for the study of Kalidasa is not only meritorious for our country but of immense value. One of the unfortunate developments that we see in India today is that Sanskrit learning is on the decline. I wish that all schools and colleges would realise that Sanskrit is above all provincial differences of caste or any other. It does not represent even a particular religion. It represents culture and therefore the study of Sanskrit should be encouraged everywhere. With that point of view I feel that the main purpose of this Resolution is very important, though I may not agree with the way it can be achieved. There is no doubt that Sanskrit is a source of inspiration in our country, even more so now when we are talking of contacts with other nations, as for example, South East Asia. We know that the culture of South East Asia has a great deal to do with Sanskrit. So many names in other countries are derived from Sanskrit, and it is wonderful to see how in some countries Sanskrit is even a State language. I wish very much that Sanskrit had more prominence in our State functions and other occasions than it has today. I personally prefer and think that Sanskrit is even more beautiful than Hindi, although I do think that Hindi js necessary for the understanding between ordinary people. Sanskrit is the root of our culture; not only is it the root of Indian culture but it is the root of South East Asian culture, and therefore it will be a language that unites all nations. In a memorial for Kalidasa. it is not enough for us to remember Kalidasa. What is in a name after all? What is in a person after all? It is what he did that matters. What we need *ia* a stimulus to Indian culture, to the study of Sanskrit, to poeiry.

[Shrimati Rukmini Arundale.] and therefore it is the spirit of Kalidasa that must find expression in our country. The memorial must not merely be an altar for him; nor must it be one of mere sentimental value. It must be more than sentimental. It must be an expression of a real sentiment. This stimulus that it will give will therefore be not only a stimulus to Indian culture; but a great spiritual upliftment to our country. The spirit of Kalidasa must pervade the whole land, because it is the spirit of India's spiritual life, India's expression in beauty. It is the very essence of beauty and therefore it is that spirit that must pervade every school, every college and so on. I would therefore like to see that encouragement is given to learning, to scholars, and to poets. I would rather that the memorial to Kalidasa was in that form than in the form of a temple or a building. I am against, the idea of a building for many reasons, inly I do not see why we should be spending more money on more buildings. One must also realise that Kalidasa means beauty. I am afraid that in modern days we are only perpetuating beauty by ugliness, because ugly structures in our country arc growing more and more in number. jd taste in our country is not equal to the enthusiasm, and as long as our taste is not growing side by side with our enthusiasm, I think we should put a brake upon all those efforts to build. Let the structure be one that is not made by hands. Let it be a structure of the spirit, and let there be a greater stimulus given to the learning of Kali-dasa. Let every school child study him. Let there be dancing, let there be music and let there be more poetry. In that way, there will be a greater appreciation not only of Kalidasa as a person but Kalidasa as a great spirit.

It has been mentioned that people will want to celebrate the days of the poets in other languages. I think that this is a very good idea, because I think that the one way of character building is to bring greatness before the minds of the people. The youth of our country needs noble and great examples, and so let the days of all the great be celebrated. It does not matter to us to which language greatness belongs, not to which province because greatness is above distinction of language or province. Such celebrations will help to bring greatness before the young and the young wiH- be inspired by it. It will certainly be a very noble example for them in their daily lives.

I do not know what the idea is regarding a Kalidasa stage. I do not know how we are going to build a stage. It must be a question of not merely having theatrical performances of Kalidasa's plays. Kalidasa himself must be able to see our work from some other world and say, "I am happy that more thought is given to beauty". We cannot perpetuate his memory by ugliness. We must perpetuate it by beauty, and jn order to do that, we must educate the people to beauty. They must be able to see beauty, they must be able to feel beauty, and in that way, let there be a spiritual stimulus. For this reascn I am in favour of celebrating Kalidasa day. We should remember our poets, and our immortals, like Kalidasa. Let his name be remembered for all time. Let the names of our other great people also be rememberec for all times, because by remembering*' the great of our land, our Iand itself shall become great.

श्री पृथ्वीराज कपूर (नामनिर्दॆशित): माननीय उपसभापति महोदय......

श्री वी० के० ढगे: क्या बात हैं कि आवाज बैंठी हुई हैं ?

श्री पृथ्वीराज कपूर : वह इस लिये कि किसी के कान के पर्दे न फट जायं मैं धीरें धीरें बोलूंगा। वह कान जो नाआशना हैं अपनी दॆश की भाषा से कहीं वह ख्वामख्वाह एॆंठ न जायं, इस लियें मैंनें धीरें से शुरू किया । पहलें मैं आप लोगों को स्वर में ला रहा हूं ।

"हूं में बेताब वह बदमस्त फसाना हैं दराज,
दिल को थामूं तो कहूं उनको संभालूं तो कहूं।"

इस लिये मैंने धीरे से शुरू किया।

इस विषय पर यह जो प्रस्ताव हमारे सामने आया हैं, मैं इसका समर्थन करने के लिये खड़ा हुआ हूं। मैं यह समझता हूं कि हर भारतवासी इसका समर्थन करता हैं। बाकी बात इसकी लम्बी खींचतान की हो जाती हैं।

कोई जमाना था जब हम अपने देश की चीजों को बाहर वालों की आंखों से देखा करते थे और तब हमने कालिदास को हिन्दुस्तान का शेक्सपियर कहना शुरू किया था। बड़ी विचित्र बात हैं कि कालिदास को हिन्दुस्तान का शेक्सपियर कहते थे। खैर, आज हमारी आंखें सही तौर पर खुल गई हैं और हमने अपने देश की चीजों को अपनी सही आंखों से देखना शुरू किया हैं। तो यह प्रस्ताव जो हमारे सामने आया हैं बड़े सही वक्त पर आया हैं। वैसे कुछ दिन पहले ही आजाना चाहिये था लेकिन फिर भी देर आयद दुरुस्त आयद। मुझे पूरा विश्वास हैं कि तमाम हाउस इसका समर्थन करेगा। इंगलैंड में शेक्सपियर के बारे में किसी ने कहा था कि अगर तमाम इंगलैंड डूब रहा हो और कहा जाय कि तुम केवल एक चीज को बचा सकते हो, तो मैं कहूंगा कि शेक्सपियर को बचा लो, शेक्सपियर की पुस्तकों को बचा लो, क्योंकि इंगलैंड अपने आप पैदा हो जायगा। मैं समझता हूं कि यह बात हम कालिदास के बारे में कह सकते हैं। अगर हमारी यह पुस्तकें, जिन में हमारी संस्कृति भरी हुई हैं, बच जाती हैं तो हम चाहे कितने नीचे गढ़े में गिर जायं, चाहे कितना डूब जायं, हम फिर उभर सकते हैं। यही कारण हैं हमारे उभरने का कि इतने वर्षों की गुलामी के बाद भी हम फिर उभर रहे हैं। इसी लिये कि इस धरती में जवाहरात और रत्न दबे हुये हैं, वह फिर से उठाते हैं, वह फिर से उभार लाते हैं, वह फिर से मुर्दों में रूह फूंकते हैं, जान पैदा करते हैं। और अब जब हमने पानी से उभर कर जरा सांस ली हैं तो हमें चाहिये कि हम उस ऋण को चुकाना शुरू करें जो हम पर अपने देश के महाकवियों और लेखकों का हैं। मैं समझता हूं कि रुक्मिणी देवी ने अभी ठीक ही कहा कि यह बहुत आवश्यक हैं कि देश की संस्कृति को संभाल कर इस तरह लोगों के सामने रखा जाय कि लोग उस रूप को देखकर अपने रूप को संवार लें, अपनी आत्मा को पहचान लें।

यहां स्टेज का भी जिक्र आया हैं। स्टेज के कई रूप होते चले गये। आज फिर स्टेज ने एक करवट ली हैं और वह जिन्दगी के नजदीक आकर हमारे सामने आई हैं। लेकिन हर जगह, हर प्रान्त में, हर भाषा में स्टेज को प्रभावित किया हैं इस महाकवि ने, हमारे कालिदास ने। अगर हम बंगाल के स्टेज को लेलें, महाराष्ट्र की स्टेज को लेलें, उत्तर भारत की स्टेज को ले लें, दक्षिण की स्टेज को ले लें, गुजरात की स्टेज को लेलें या कहीं किसी जगह भी जायं, सब जगह प्रभावित करने वाले हमारे महाकवि कालिदास ही हैं। यहां यह चीजें बिगड़ती गयीं और केवल एक मनोरंजन का विषय बनकर रह गयीं। लेकिन अब जमाना बदल रहा हैं और उसी के साथ साथ स्टेज ने भी कर्वट ली हैं, बड़ी प्यारी अंगड़ाई ली हैं। स्टेज की इस कर्वट में, स्टेज के इस उठान में जो चीज मुझे नजर आती हैं जो इसको आगे खींचती हैं वह कालिदास का काव्य हैं। मैं संस्कृत नहीं पढ़ा हूं। लेकिन अब मैं अपने आप संस्कृत पढ़ रहा हूं और आगे की राह पैदा कर रहा हूं ताकि जब किसी गुरु से पढ़ूं तो तकलीफ न हो और दो वर्ष बाद इत्मिनान से पढ़ूं।

जब मैंने ड्रामा शुरू किया तो मेरे ड्रामे का पहला खेल कालिदास का शाकुंतलम् ही था। मैं संस्कृत नहीं जानता था इस लिये मैंने शाकुंतलम् अंग्रेजी में पढ़ा, हिन्दी में पढ़ा, उर्दू में पढ़ा और जितने भी अनुवाद मुझे मिल सके उनको मैंने पढ़ा। उसके बाद फिर मैंने शाकुंतलम् को हिन्दी में लिखवाया

[श्री पृथ्वीराज कपूर]

और यह बतला दिया कि उसकी भाषा और उसका रूप क्या हो। फिर भी मैं समझता हूं कि शाकुंतलम् जिस रूप में लिखा गया है उसी रूप में हमारे सामने आना जरूरी हो जाता है। हमारे पास एक एक्सपेरिमेंटल स्टेज है और वह स्टेज कोई इंडिविजुअल नहीं पैदा कर सकता, कोई व्यक्ति अपने आप नहीं कर सकता है क्योंकि वह एक खर्च की चीज होगी, आमदनी की चीज नहीं होगी। इस लिये स्टेट को हेल्प की जरूरत है। जिस प्रकार हम पुरानी चीजों को कायम रखते हैं क्योंकि उससे हमें इंसपिरेशन मिलता है, उसी तरह यह चीज भी उसी में आती है। आज अवंती की हालत कसमपुसी की हालत है, कोई ठीक से पूछ नहीं रहा है। कई वर्ष पहले वहां मैं गया था। जिन दिनों मैं विक्रमादित्य खेलने जा रहा था तब मैं अवंती गया था। वहां की मिट्टी अपने मस्तिष्क में लगाने के लिये मैं वहां गया था। वहां जाकर मैंने वह मंदिर देखा, वहां की सब जगहें देखीं, वहां की घाटियां देखीं। वहां जो आबादियां मैंने देखीं उन में कुछ आत्माएं विचरती नजर आयीं और फिर साथ ही मेरे कुछ आंसू भी गिर गये अपनी दशा पर कि हम वहां आबादियां क्या वीरानियां पैदा करते हैं। अब अगर हम उन वीरानियों में आबादियां देखते हैं तो हमारी कल्पना में वह पुरानी चीजें आ जाती हैं जिन को हम किताबों में पढ़ते रहे हैं। खैर वह बहुत ही सुन्दर जगह किसी जमाने में रही है और उसका संभालना हमारा फर्ज हो जाता है। अगर हम संभालेंगे नहीं तो हम बड़े खुदगर्ज कहे जायेंगे। यही कहा जायगा कि हमने खुद ले लिया लेकिन हमने दिया कुछ नहीं और फिर इस में नुक्सान हमारा ही है, हमारी आने वाली संतानों का है।

यह एक बहुत बड़ी बात है कि हमारे देश ने आठ वर्ष के अन्दर ऐसी बातों पर विचार करना शुरू कर दिया है, कुछ कदम उठाये हैं। हमारे यहां साहित्य की अकेडेमी बनी, शिल्पकलाओं की अकेडेमी बनी, ललित कलाओं की अकेडेमी बनी, यह बहुत बड़ी बात है। हम दूसरे देशों की ओर देखें तो हमें अपने ऊपर गौरव होता है कि हमने बहुत जल्दी अपने को संभाल लिया, बहुत जल्दी हमने सही राहों को अख्तियार कर लिया। तो उन चीजों की ओर हम अग्रसर हो रहे हैं, उन पर चल रहे हैं। आप बर्नार्ड शो का एक ड्रामा देख लीजिए, उसमें उसने शेक्सपियर का कैरेक्टर रखा है और क्वीन एलिजबेथ का। एलिजबेथ से शेक्सपियर उस ड्रामे में दरख्वास्त करता है कि एक नेशनल स्टेज होना चाहिए। वह कहता है कि जब मैं हैमलेट खेलता हूं, मैक्बेथ खेलता हूं, ओथेलो खेलता हूं, तो हाउस खाली रहता है और आसपास से लोगों को बुलाकर बैठाना पड़ता है---कभी कभी मुझे भी ऐसा करना पड़ता है। तो शेक्सपियर आगे कहता है, लेकिन जब मैं "ट्वेल्थ नाइट 12th Night" खेलता हूं, जब मैं "दी मच एडो एबाउट नथिंग The Much Ado about Nothing" इत्यादि हंसी खुशी के नाटक खेलता हूं जिस में लड़का लड़की बन के घूम रहा है तो हाउस भर जाता है। वह कहता है कि यह नेशन जिंदा नहीं रह सकती अगर ऐसी छिछोरी बातें उसके सामने आयेंगी। शेक्सपियर चाहता है कि उसका देश मैक्बेथ को, ओथेलो को, कोरोलेनस, इत्यादि को देखे। हालांकि शो ने ड्रामे में जो बात लिखी है वह गलत बात है, लेकिन उसने उस वक्त के इंगलैंड के आदमियों के दिमाग का तर्जुमा किया। एलिजबेथ उस ड्रामे में कहती है कि आज मैं यह साहस नहीं करती कि काउंसिल आफ एक्सचेकर (वित्त मंत्री) को इस प्रकार का प्रस्ताव रखने की इजाजत दूं, न ही हमारे लोग इसके लिए तैयार हैं। लेकिन मैं चाहती हूं कि आज से सदियों बाद शायद एक वक्त आये कि देश इस बात के लिए आमादा हो कि उसका अपना एक नेशनल स्टेज हो, उस वक्त शायद यह बात हो लेकिन आज

अभी वह बात पैदा नहीं हुई। तो कहने का मतलब यह है कि उनके यहां साहित्य इतना बढ़ा चढ़ा होने पर भी उस वक्त इस किस्म की बातें नहीं थीं। अब तक इंगलैंड ने अपना नेशनल थियेटर नहीं बनाया था, यही "Stratford-on-Avon" का थियेटर है जो लोगों का बनाया हुआ है, न जाने क्यों उनकी गवर्नमेन्ट हिचकिचाती है। लेकिन इसके मानी यह नहीं है कि हम उनसे यह गलत बात सीखें। हां, कभी कभी बेवकूफों से भी बात सीखनी पड़ती है वह इस तरह कि किसी आदमी ने दूसरे आदमी से सवाल किया कि आखिर तुमने ये बातें कहां से सीखीं तो दूसरे ने जवाब दिया "अज जाहिलान" बेवकूफों से, क्योंकि जो बात वे करते थे वह मैं नहीं करता था। इसलिए जब हम दूसरे मुल्कों की गलतियों से गुरेज करेंगे तो हम खामखवाह सीधे रास्ते पर आ जायेंगे। क्योंकि दूसरे ने नहीं बनाया है इसलिए हम भी नहीं बनायें ऐसा कहना गलत है। पहले इस काम को हम शुरू करें। तो इसलिए कालिदास के नाम पर चाहे हम स्मारक बनावें, मंदिर बनावें या भवन बनावें, बनायें जरूर चाहे नाम कुछ भी रखें। मैं तो चाहता था कि श्रीमती रुक्मिणी की तरह का नाम रख दिया जाता तो और अच्छा होता (हंसी) "Handsome is as handsome does" खूबसूरत वह है जो हसीन काम करे। रोजाना काम से जिसका ताल्लुक हो वह काम खूबसूरत काम हो, वहां एक एक्सपेरिमेंटल स्टेज हो जिसमें ४, ५ या १० हजार तक सीटें हों, यह नहीं कि उसमें ७५ लाख रु० खर्च हो जायं, एक बड़ी मॉनुमेंटल बिल्डिंग बन जाय। बुरा न मानें, मुझे याद आ गया कि आगरे में एक बड़ा भारी मंदिर बन रहा है। जब जब मैं वहां गया---एक दफा मैं सन् १९४३ में वहां गया था---उसके बाद १९५५ में मैंने देखा कि वह बनता चला आ रहा है। ठीक है, बनता रहे, बड़ी अच्छी बात है। १९४३ की बात है, एक शख्स वहां काम कर रहा था, उसका चार बरस का बेटा वहां पास बैठा हुआ, और वह शख्स बहुत खूबसूरती से अंगूर गढ़ रहा था। मैंने पूछा, भाई इस में कितने दिन और लगेंगे। वह कहने लगा जब मैं इतना बच्चा था तब मेरे बाप बना रहे थे और अब मेरा यह बच्चा आगे बनायेगा, या उसका बेटा या बेटे का बेटा बनायेगा। बहुत अच्छी बात है, चलता रहे इसी तरह से काम। तो मैंने यह मिसाल आप लोगों की एटेंशन को ड्रॉ करने के लिए बताई है, मैं लोगों का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं कि वे इस बात को न सोचें कि आज हम उस पर एकदम से ७५ लाख रुपया खर्च कर देंगे। हमारे बम्बई में भी थियेटर बनाने की बात सोची गई, हमारी म्यूनिसिपैलिटी उसे बना रही है। लेकिन--

"अल्लाह ने किस्मत में मेरी लिखी फकीरी,
फिर सोचा मिजाज उसका अमीराना बना दूं।"

हमारे देश में हमारे लोगों के दिमाग अमीराना हैं, हमारा दिल अमीराना है, हमारा ठाठ अमीराना है। वह देखिए, ३०, ४० बरस से मंदिर बन रहा है। इसी तरह से ताजमहल भी बना, और भी बहुत सारी चीजें बनीं। अभी भी हम यह जानते हुए कि हमारे देश में बहुत गरीबी है, कई बरसों की गुलामी ने हमें गरीबी के गढ़े में ढकेल दिया और अब हमें उससे निकलना है। लेकिन इसके मानी यह नहीं है कि उसी की तरफ ध्यान लग जाय। अगर हम संगमरमर के पत्थर जुटाना शुरू कर दें और उसी तरह से काम करना शुरू कर दें तब तो हमारा सिर्फ वक्त ही जाया होगा। ५० लाख का थियेटर बनने में तो बहुत देरी लगेगी, ५ लाख का बनाना हो तो अभी बन जाय। तो मेरा कहना यह है कि काम शुरू करना है, भवन बनाना है तो एक मामूली सा छप्पर चाहे वह घास का हो, या तिनकों का ही क्यों न हो बना लीजिए। हमारे देश में बड़े बड़े कारीगर पड़े हुए हैं जो घास फूस के ऐसे छप्पर, ऐसी झोंपड़ियां बना देते हैं कि बड़े बड़े महल उन की खूबसूरती के आगे नहीं टिक सकते।

[श्री पृथ्वीराज कपूर]

धरमपुर में मैंने भीलों की बनाई हुई झोंपड़ियां देखीं, कई एक महल उन पर निछावर हो जायंगे। तो कालिदास का भवन भी इसी तरह का बनना चाहिए जहां हर एक आदमी, हर एक इंसान जा कर बैठ सके। उसे फिर चाहे आप भवन कहें, या मंदिर कहें या मकान कहें। (समय की घंटी)

श्री उपसभापति : आपके २० मिनट हो गये।

श्री पृथ्वीराज कपूर : आप ही ने तो मुझ से कहा बोलने के लिए। (एक माननीय सदस्य की ओर इशारा करते हुए) वे अपना समय मुझे बोलने के लिए दे रहे हैं। कितने समय तक मैं बोल सकता हूं? मैं तो समझता हूं इस में बोलने की जरूरत भी नहीं है, हर एक इस प्रस्ताव का समर्थन करता है।

श्री उपसभापति : बोलिये, बोलिये।

श्री पृथ्वीराज कपूर : तो मैं यह अर्ज कर रहा था कि चाहे आप झोंपड़ी ही बना दें, लेकिन बनायें जरूर। इस सिलसिले में मुझे एक छोटी सी बात, रुक्मिणी जी के यहां की बात बहुत पसंद आई और मैं अभी तक उसे नहीं कर सका हूं। मैं यह चाहूंगा कि उसे अपना लिया जाय। मैंने देखा कि झोंपड़ियां में ही उन्होंने अपना सारा साजो सामान और सैट रखे हैं। सबसे बड़ी उम्दा बात मैंने यह पाई कि देश के जो वृद्ध कलाकार हैं उनको वहां पर जगह दी हुई है, बड़े बड़े संगीतज्ञ हैं, बड़े बड़े कलाकार हैं। जो हमारे पुराने महान् कलाकार हैं अगर कोई उनकी देखरेख नहीं करेगा तो वे विचारे भूखों मर जायंगे। हमारे देश में ऐसा हुआ भी है। हमारे संगीत सम्राट, उस्ताद अलाउद्दीन खां साहब का एक मामूली सी जगह पर तंगहाली में देहान्त हो गया। हां, उनके मरने के बाद हमने उनका बुत बनाया। कोल्हापुर के लोगों ने उसको बनाया।

लेकिन यह बात हुई और कुछ दिन बाद वह खत्म हो गई। किसी ने सहारा नहीं दिया तो किस तरह से वह चीज आगे चल सकती थी। आज हमारे देश में लाखों साहित्यकार नाटककार और कई तरह के विद्वान मौजूद हैं। उनके पास तरह तरह की कला हैं और वे दूसरों को देने को तैयार हैं, मगर उनके पास सहारा नहीं है। अगर हम इस तरह का कोई स्थान बना दें जहां कि वे कलाकार अपनी कला को दूसरों को सिखा सकें तो हमारे देश के हजारों नवयुवक तरह तरह की कलाएं सीख सकते हैं। आज इस चीज की हमारे देश में कमी है जिस के कारण हमारे जो बड़े विद्वान हैं वे अपनी कला को देश के सामने नहीं ला सकते हैं। बंगाल और महाराष्ट्र में इस तरह की बात है किन्तु यह चीज सारे देश के लिए होनी चाहिये। इस देश के अन्दर जो महान कलाकार, नाटककार हैं वे तो सहारा चाहते हैं, अगर उनको सहारा मिल जायेगा तो वे अपनी कला का प्रदर्शन, आसानी के साथ कर सकेंगे और जनता भी उससे लाभ उठा सकेगी। अगर सरकार की ओर से सहायता मिल जाय तो देश के अन्दर इस तरह के करोड़ों केन्द्र बन सकते हैं और कला का फैलाव हो सकता है। इस तरह के जो भी कला स्थान होंगे वे कोई खास जगहों पर ही न खोले जायं, आप गंगा के तट पर या बनारस के तट पर बना सकते हैं, वहां आकर लोग कला सीखेंगे, उनको तो सहारा चाहिये। यह जो प्रस्ताव है इसी बात को महत्व देता है। हमारे देश में केवल कालिदास ही कवि नहीं हो गये हैं, और बड़े नाटककार और साहित्यकार हैं जिनकी रचनाएं अभी तक जनता के सामने नहीं आई। मेरा कहना है कि अगर इस तरह के केन्द्र बन जायेंगे तो वहां पर जितने भी लेखकों, नाटककारों और साहित्यकारों की रचनायें हैं, वे सब मौजूद होनी चाहियें। जितने भी ग्रन्थ, नाटक और दूसरे विषयों के ग्रन्थ हैं, अगर वहां पर होंगे तो सब लोग वहां जा जा कर फायदा उठायेंगे। मगर यहां तो सहारे के बिना लोग कुछ कर नहीं पाते हैं। इस सिलसिले में मैं यह कहना चाहता हूं

कि सीताराम चतुर्वेदी जी ने नाटकों का ड्रामों का एक संग्रह प्रकाशित किया था, उनका पहला ही संग्रह प्रकाशित हुआ मगर और नहीं हो सका ।

आज उनके पास सहारा न होने के कारण उनकी किताबें वगैरे छपी रह गई हैं । मुझे पूरी उम्मीद हैं कि सरकार की ओर से उनको कुछ न कुछ मदद जरूर मिलेगी ।

इसके साथ ही साथ मैं यह भी कहना चाहता हूं कि जिस स्टेज के लिए जो ड्रामा लिखा गया हो, उस को उसी शक्ल में, उसी ओरीजनेल्टी में खेला जाय । बंगाल और महाराष्ट्र में तो इस बात का ख्याल किया जाता हैं मगर दक्षिण में इस तरह की बात होती हैं या नहीं मैं नहीं कह सकता हूं । अगर हम उस ड्रामे का स्वरूप बदल देंगे तो वह ड्रामा कुछ नहीं रहेगा, इस लिए हमें इस बात का विशेष ख्याल रखना चाहिये । हमें इस बात का ख्याल रखना चाहिये कि हम जो कुछ भी अनुवाद पुराने ग्रन्थों से करें, असली स्वरूप को रखना न भूलें, अगर हम ऐसा नहीं करेंगे तो उस ड्रामे में कोई जान नहीं रह जायेगी । तो मेरे कहने का मतलब यह हैं कि अगर सरकार की ओर से इस तरह के स्टेज बना दिये जायेंगे तो वहां पर काम आप के लिए अपने आप होता रहेगा । जिस तरह से एक छोटा सा गढ़ा बना देने से चारों ओर से पानी आ जाता हैं, उसी तरह से अगर सरकार की ओर से इस तरह का कोई "स्थान" बना दिया जायेगा, तो वहां आदमी खुद बखुद आते रहेंगे और अपना काम करते रहेंगे । इस काम में सिर्फ सहारा देने की जरूरत हैं । अगर सरकार ने इस में सहारा दे दिया तो जिस तरह से गढ़े में पानी इकट्ठा हो जाता हैं उसी तरह से वहां पर लोग इकट्ठा होकर उस स्थान की उन्नति करते रहेंगे ।

श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय (मध्य भारत): आपने जो सुझाव दिया हैं, मैं इसका समर्थन करता हूं ।

श्री पृथ्वीराज कपूर : मैं इस बात के लिए मुबारकबाद देता हूं । ज्यूं ज्यूं इस काम में सहारा मिलता रहेगा त्यों त्यों यह काम आगे बढ़ता रहेगा । अंग्रेजी में एक कहावत हैं : People support each other; people support the Government and the Government supports the people.

अगर इस तरह से किया जायेगा तो हम बहुत जल्द तरक्की कर लेंगे ।

जहां तक कालिदास उत्सव मनाने का सवाल हैं, इस बारे में मैं यह कहना चाहता हूं कि और देशों में भी इस तरह के उत्सव मनाये जाते हैं । इस सम्बन्ध में कमेटी बनाई जायेगी वह इस बारे में फैसला कर सकती हैं कि किस तरह से यह उत्सव मनाया जा सकता हैं । मैं आखिर में फिर इस बात को दोहरा देना चाहता हूं, स्टेजों में जिस तरह के ड्रामे खेले जायें उन का स्वरूप न बिगाड़ा जाना चाहिये । मैं तो इस काम को अब नहीं कर सकता हूं, लेकिन मुझ से भी अधिक पढ़े लिखे लोग इस देश के अन्दर मौजूद हैं जो इस काम को कर सकते हैं । हम वहां पर जितने पुराने नाटक हैं उनको तजुर्बे के तौर पर खेल सकते हैं, मगर इस बात का ख्याल रखा जाना चाहिये कि जो ओरीजिनल चीज हैं, जो स्वरूप हैं, उसको बिल्कुल न बदला जाय । इस चीज के करने में हमें पैसे या आमदनी का किसी तरह से भी ख्याल करना नहीं होगा । अगर हमने इस तरह का काम किया तो हम अपने पुराने ड्रामों, नाटकों और दूसरी चीजों को तरक्की दे सकते हैं । इन अल्फाज के साथ मैं इसका समर्थन करता हूं ।

DIWAN CHAMAN LALL (Punjab): Sir, this House is very fortunate in that its Constitution permits the entry into it of representatives of art and literature and I am quite sure, Sir, you and all M ;mbers on the floor of this House, will ai'iee with me in considering our-selves very fortunate that .we have the Ust Bpeaker as a Member of this. House as well as Rukmini Devi, thes* two who have made passionate appeals in regard to the Resolution b«lw tbe

[Diwan Chaman Lall.] House. Rukmini Devi said that she was not possessed of Sanskrit but we -all know that she ls possessed of beauty and, therefore, in her appeal for beauty she was a very apt preacher.

SHRI V. K. DHAGE: Apt and eloquent.

DIWAN CHAMAN LALL; My hon. friend says "apt and eloquent"; beauty is eloquent in itself, as my hon. friend knows.

.The last speaker has ranged over a wide area of this subject, which has been illumined with such great scholarship by Dr. Kane whose knowledge of these matters is something that always astonishes me.

We are fortunate, Sir, that we have got away from the ordinary heat and dust of political warfare on the floor of this House and are considering for the first time, I believe, in the history of this Legislature, something that is of vital interest to the culture of our people and 1 think we must congratulate my hon. friend the mover of this Resolution for having been fortunate enough in the ballot to have brought this Resolution to the attention of this non. House.

Now. Sir, there has been a little controversy in regard to certain unessential matters relating to this Resolution. The main issues should not be lost sight of. The one controversy that was started was in connection with the date of Kalidasa. My hon. friend Dr. Kane did not a^ree with others who said that the date was about the 3rd or 4th Century A.D. He thought it was a different date. Does it really matter what the date was? Is it of any importance as to when Rama was born or whe*VShakespeare was born or when Jesus Christ was t*>rn? P*ople do not know, even in the case of the great Gautama BiidriTia as to the exact date of the birth; we know approximately the century but it does not matter in the least what the date was, so long as we are aware of the central significance of the work of the individual that he performed and this Resolution is meant to emphasise that particular central fact. Now, Sir, it is said by learned men, and men, as my learned friend Dr. Kane knows, like Weber and Lassen have held that Kalidasa belonged to the second epoch of the Sanskrit era, the second era of the great literature of Sanskrit. Now all the other great writers, poets and philosophers wrote in a language which was not understood by the people; it was a pure form of Sanskrit. But here Kalidasa introduced into some of his characters the broken language of the people, the bowdlerised Prakrit of that particular era and from that they drew their conclusion. From that particular fact they came to the conclusion that it must be between the third and the fourth century, maybe even the fifth century A.D. As I said, it does not really matter. What matters is, what Kalidasa stands for and what matters is that this Resolution should be utilised by the Government and by tha people of our country to focus our attention upon those vital matters which affect our cultural future. It is not only the people of those great times that are going to affect our future, which undoubtedly they are. but it is the attention that is to be paid to the cultural side which is going to build up this country as a great nation, Now again, Sir, when we talk about these little matters concerning this do hon. Members realise that there is even a doubt as to who Kalidasa was and who actually wrote Shakuntala and the various other epics and lyrical poems and dramas which are ascribed to Kalidasa? In fact. Sir, learned men like my very dear colleague, Dr. Kane, consider that there were three Kalidasas and astronomers have given Kalidasa as tbe name of the figure three in reference to the existence of three different Kalidasas the triad to whom

are to be ascribed these various great plays and epics and lyrics. Therefore we must not worry about who it is who represents Kalidasa so long as we have been fortunate enough in our country to have preserved the literature that is ascribed to either the first or the second or the third Kalidasa. Hence we have to remember that there is a significance in trying to establish some sort of an academy or some sort of an institution or some sort of a stage where Kalidasa's works would be remembered, would be played, would be recited. But may I say, Sir, that it is not necessary to celebrate the day, I presume, as a holiday because we in our country are possessed of so many great men, I believe more than 365 have been listed, that if we were to celebrate for each a holiday, we would have no work to do but to wait for the leap year, the extra day, in order to find some work to do?

DH. RAGHUBIR SINH: Are we sure that no eminent person was born on that particular day of the leap year, i.e. on the 29th February?

DIWAN CHAMAN LALL: Well, we do not know and there is my learned friend Dr. Kane who may raise a doubt about that matter.

The question is not the celebration of a holiday but the celebration of the spirit that lies behind this Resolution and it is not necessary to devote our attention to the question of one stage.. Why not a stage everywhere? Why in Ujjain? Why in that particular area of Avanti a stage dedicated to Kalidasa? Why not a stage in every town and in every village dedicated to the revival and renaissance of the ancient spirit of the drama. I do not realise why we should limit ourselves to one particular spot and focus attention on that particular area. The need of the hour today is a revival of the drama. We are proud of the great dramatists who were our ancesters in culture [m] our counte-?' we are pwttS *oi* tfeef and great credit goes to Mr. Kapoor for having divested the revival of the drama from what I might call the commercial interest. So long as the commercial interest remains, so long will the drama not be what it is meant to be. My learned friend referred to Bernard Shaw's Dark Lady of the Sonnets in which he described the conditions, naturally fictionally which Bernard Shaw ascribed to Shakespeare in regard to the playing of his dramas. Now, Sir, I have attended shows of Othello and Othello played by Paul Robeson. I had Bernard Shaw sitting right behind me at the Savoy Theatre in London and I can assure you I have never in my whole experience seen a play played with more magnificence than it was by that Negro singer, Paul Robeson. It was a wonderful sight and the house was packed and hundreds were turned away. So whatever might have been true in the time of Shakespeare, it is certainly not true in the time of Mr. Kapoor.

SHRI KISHEN CHAND: May I know from the hon. Member whether h$_e$ thinks that the tragedies of Shakespeare ar$_e$ superior to the comedies or the historical plays of Shakespeare.

DIWAN CHAMAN LALL: My hon. friend wishes to compare an elephant with a camel or a giraffe. It is his concern. I cannot compare a tragedy with a comedy nor can I compare one dramatist with another. They are all great dramatists in their own particular manner. How can I compare Ibsen with Bernard Shaw?

SHRI KISHEN CHAND: Critics say that the historical plays of Shakespeare are superior to his tragedies or comedies.

DIWAN CHAMAN LALL: I would like my hon. friend not to be carried away by regional or national likings or dislikings in regard to great art. Art is great, no matter where it comes from For me Shakespeare is great just as Kalidas?, is great; Bernard

[Diwan Chaman Lall.]

Shaw is great just as Ibsen is great; Euripides and Sophocles, the two Greek dramatists, are as great to me as any modern dramatist of high repute. I do not draw any line, any distinction. I go to the play itself and consider whether intrinsically it is great or not, not whether it is great in comparison with something else that has been written by somebody else. That is not the criterion. We must therefore aim at this that we must try not only to set up a stage specially designed for this purpose in that particular area but ask the Government to set up stages everywhere and ask each State Government to do the same so that there may be a revival of the art of drama of which we are the great inheritors. It has been lost during these centuries. Every country, it is said, deserves its own Government. Every country also deserves its own literature. The literature of an era is merely a reflex of the life of the people or the culture or the education •r the longings and ideals of th* people in whose midst that particular culture has been developed. Therefore it is necessary, while we build up our nation raising the standard of life of our own people, at the same time to raise the standard of the culture that they have to look forward to and in that respect we must not forget, not merely remember Kalidasa but also the other great dramatists of that era also earlier and later whom we must remember. We must revive the plays and speak the language, not the one which is understood by a few people but the one which is understood by - many. I have not the slightest doubt that Rukmini Arundale would like to learn Sanskrit; it would be a -.- good thing. I have tried to learn and I am still struggling with my Sanskrit. It is a very good .anguage indeed, but Sanskrit is no longer a spoken language of the people and to-day you have to deal with your culture in a language which the people will mderstand if they are going to bene-K from it. If I listen to the All India Radio to-day when the Hindi bulletin is put out I am unable to understand it but I understand quite well when I try and get the news from Pskistan, the country Mr. Kapoor and I <ome from, because we cannot understand the high-falutin language used in an ordinary bulletin, and if we ca inot understand it, I am quite certain that there are millions of Punjabis here living in Delhi and round about Delhi who are unable to understand it. Your culture is lost, it has no effect upon the people. The language that you use therefore must be the language of the people in order to bring the benefits of culture to them and those theatres that my friend Mr. Kapoor wants to be built, should be bu It on that basis, on the regional basis, so that the language of the people is the language that is used, whether it is in praise of Kalidasa—not in Sanskrit but in the language of the region—or in enacting his dramas or the other dramas of modern or ancient times.

Now, Sir, Kalidasa had a tremendous advantage over many other dramatists of the ancient period. He was not only a dramatist but was a great epic poet. He was not only an epic poet but he was a great lyrical poet. People who have read them—I have read the translations; I have not read the original in Sanskrit—remember two of his great lyrical works, Meghdoot and Rithusamhar. Meghdoot is the story, as hon. Members know, of a great exiled lover sending a message to his wife by means of the cloud. It is a most magnificent story. Similarly, Rithusamhar is a poem which deals with the six seasons. Somebody talked about the translation of these works of Kalidasa. It is an extraordinary thing that the first translation was made in the year 1789 by Sir William Jones aini I think two years later a Gem; an. translation was made of the Devi[1] Xin gs li recension. There were at least 10L.J recensions there was (' Devanagari and Bengali recensions and then there was a South Indian recen-

sion and a Kashmiri recension. At r least four of them are recorded. The Germans were the first to translate them. Not only that; if you take the case of Rithusamhar, it was translatea in 1840 in Latin prose and Metric German. Such was the great interest that the foreigners evinced in this. We must therefore try and establish not only these stages that my hon. friends want but also academies which would undertake the translation of these classical works for the benefit of the people at large and they must translate them into the language of the common people. I need not weary the House by dealing with the various other aspects of the epics ot Kalidasa or the other plays that are attributed to him. Suffice it to say, Mr. Deputy Chairman, that this is a heritage which we must cherish and if this is the manner in which it can be cherished, as formulated in the Resolution, let us do it in that particular manner but if there is a better way, then let us do it jn that better manner. But let us not forget that these occasions which are few and far between for the discussion of cultural matters on the floor of this House should be utilised to the fullest extent in bringing this subject not only before the Administration but also before the public in order that our eyes may be turned towards the greater needs of life while we are discussing those others which I consider to be of lesser moment.

THE PARLIAMENTARY SECRETARY TO THE MINISTER FOR EDUCATION (DR. K. L. SHRIMALI): Mr. Deputy Chairman, I consider it a great privilege to reply to this debate in which so many distinguished artists, literary men, and dramatists have participated. Though I am in full sympathy with the objects of the Resolution, I am afraid I am not in a position to accept the Resolution in the form in which it has been presented. Nobody can doubt the greatness of Kalidasa. He is a great national poet. He ranks among the greatest poets of the world. It is not neces-

sary for us at this stage to set up a memorial for him. He has already set up a memorial for himself by writing immortal poems and dramas.

In this connection there are one or two points which I wish to place for the consideration of the House. In a democratic society we have to make a distinction between the functions of the State and the functions of the society. As far as I understand, the field of art, the field of literature, the field of creative activity should be left to the people. The State should certainly encourage and help in the growth and development of art and literature but the creative urge and the creative faculties should be allowed to grow in a spontaneous spirit and in an atmosphere of freedom. There is always a risk involved in art and literature becoming the responsibility of the State.

Hon. Members are probably aware that the Government have already set up Sahitya Academy and the Sangee' Natak Akadami. These institutions which are supported and sponsored bj the Government will promote ancient and modern literature. The Sahitya Academy which we set up only recently has already undertaken the publication of Kalidasa's works. The Academy appointed an Editorial Board and has already requested our Chairman, Dr. Radhakrishnan, to edit all the works of Kalidasa. The work has already been started and it is hoped to bring out a critical edition of Kalidasa's works. We have also set up the Sangeet Natak Akadami which will promote drama and music and thus preserve our rich cultural heritage in this field. As I said, Sir, if we wish to develop democratic ideals in our society, we should always differentiate between the functions of the State and the functions of the Society. A welfare State like ours should always help, promote, and encourage art and literature but there are dangers involved in the Government taking over all these activities. They had better be left to the creative side of individuals I and voluntary associations.

DR. SHRIMATI SEETA PARMANAND: What are the dangers?

DR. K. L. SHRIMAL1: The creative urges do not find expression at the orders of the Government. They are spontaneous. The artist does not give expression to his ideas at the instance of anybody or at the command of anybody. The creative urge finds its best expression spontaneously. We have before us the example of Great Britain in this matter. The Shakespeare Society, the Dickens Society, the Shaw Society and various kinds ot associations which are promoting the literary tradition and heritage of the past have not been set up by the Government but by the people. Sir. Kalidasa represents an age when the Indian civilisation was at its great height.

MR. DEPUTY CHAIRMAN: You will take more time?

DR. K. L. SHRIMALI: Yes, Sir.

MR. DEPUTY CHAIRMAN: You can continue in the afternoon.

The House stands adjourned till 2-30 P.M.

The House then adjourned for lunch at one of the clock.

The House reassembled after lunch at half past two of the clock, MR. DEPUTY CHAIRMAN in the Chair.

DR. K L. SHRIMALI: Sir, I was saying that Kalidasa belonged to an age when Indian civilization had reached great heights and in his poetry he has given expression to some of the best ideals of life—moral, spiritual and aesthetic—to which our civilization has always attached great value. Now that we are developing our society, it is only natural that we should turn back our minds to our great poets, artists and spiritual leader- , for inspiration. I therefore, when I am not accepting the Resolution in its present form, do not wish in any way to underrate the great contribution which Kalidasa made to our literature, in fact to the world's literature. He would be classed as one of the greatest poets in the world's literature. But I think, Sir, we should always keep distinction between the work which should be done by the society and work which should be done by Government. It is my conviction that as far as the field of art and literature is concerned, it should be left to the people. The growth of literature and art really depends on the spontaneous urges and the creative side of human beings. If the Government takes over control and begins to guide the literary and artistic activities of the people, all these activities might lose their spontaneity and creativity and the artistic forms and literary forms might just become mechanical. Sometimes they might become subservient to the State. It is, therefore, very important that we should preserve the freedom for the artist and the literary man. It is with that intention that the Government of India have set up 'Sahitya Akadami' and 'Natak Akadami'. Government of India could themselves have done the work directly. There was nothing which could have prevented the Government of India from doing all this work directly. It is the policy of our Government that in the field of art and literature people should always be associated with these activities and. therefore, we have set up these autonomous bodies. Artists and literary men are members of these committees and give advice as to how art and literature should be propagated, how the cultural heritage of our country can be preserved, how the cultural values for which we have stood for generations can be continued.

Now, Sir, if we look at the Resolution as it has been worded, it says: —

"This House is of opinion that, with a view to commemorate

Mahakavi Kalidasa and his lmmoriai > contributions to world literature, | Government should—

(i) declare Kartika Shukla Ekadasi as 'Kalidasa Memorial Day' to be celebrated throughout the country;".

If I have understood this part of the Resolution correctly, I expect it is the intention of the mover that a day should be set apart for the celebration | of this great poet and it should be a holiday. I should like to submit that in our country, we have already too many holidays. In fact, if we look at the list of holidays that we have in our educational institutions—in the schools and colleges—we will And that the students have to keep out of the school for a large number of days j during the school year. And if we can help we would like to curtail the number of holidays that we have in the educational institutions and not extend them. As I said, I do not in any sense wish to underrate the great contribution that Kalidasa made to the development of literature but declaration of a holiday is not the only way to commemorate the great poet. In fact, we should not only look towards the past, but we should also look towards the future. A great civilization, a growing civilization does not merely glorify the past, but it also looks forward—it has dreams, it has visions of the great future. And if we wish to build up a great future, if we wish to create great artists and literary men and scientists, it is through hard work and perseverance that we shall create artists and literary men and not by giving holidays. I, therefore, cannot see how the purpose would be served by declaring a holiday in the name ol: that great poet.

SHRI H. P. SAKSENA (Uttar Pradesh): Delete that part of the Resolution.

DR. K. L. SHRIMALI: Then, coming o the second part of the Resolution:

"erect a Kalidasa Memorial Temple at Avanti (Ujjain), and take steps for the setting up of a Kalidasa Academy at that temple for the collection of all works of Kalidasa. their publication in the different languages of the world and the promotion of research therein;".

[have just mentioned that we have set up a 'Sahitya Akadami' on which we have representatives, not only great literary men from all over India but various State representatives also

SHRI KISHEN CHAND: May I know from the hon. Parliamentary Secretary that this 'Sahitya Akadami' is established to encourage modern writers and it has nothing to do with the commemoration of poets?

DR. K. L. SHRIMALI: I shall explain that. The purpose of 'Sahitya Akadami' is to promote all 'Sahitya', whether ancient or modern, and immediately after the 'Sahitya Akadami' was established it appointed a board of editors to prepare a critical edition of Kalidasa's works. Our distinguished Chairman has been requested to edit all these works, to become the general editor, and the work is already on way. So, I do not see what further purpose would be served by setting up a separate academy. It is true that Kalidasa has been a great poet but what about Valmiki, who is the father of all poetry? What about 'Bhavabhuti'? What about Tulsidas who is a great national poet? Sir, we have to create interest in all these national poets, both modern and ancient. And it will be the function of this Sahitya Akadami to do that work. And I am glad to say, Sir, that that work' is already being done.

Then, Sir. the third part of the I Resolution is.....

SHRI GOPIKRISHNA VIJAIVAR-GIYA: How much money is provided for that work in the Budget?

DR. K. L. SHRIMALI: I do not have that information just now, but I may assure the hon. Member that that work of the Akadami will not suffer on account of lack of funds.

Then, Sir, the last part of the Resolution is to found a Kalidasa stage. It is a very good idea to have a stage where Kalidasa's plays might be staged. I am. however, very doubtful, Sir, whether we can have a stage in our country where only Sanskrit plays of Kalidasa might be staged. In any case it is my conviction that these activities should be the responsibility of the people, and not of the Government. We have before us the examples of the Shakespeare Society, the Dickens Society and the Shaw Socie.y of Great Britain. Now all these societies have been founded and are being run by the people themselves. They never approached the Government for setting up these societies, or for sett' J up any stages for staging the dramas. In this matter, Sir, I think, the artists and the literary men should jealously guard their interests and their Tights, and not surrender them to the Government. As far as the Government are concerned, they are doing their duty by setting up tbe Sahitya Akadami and the Sangeet Natak Akadami. We have already taken a step forward by establishing these academies. But let not ths Government be asked to go to an extent to control the life of the artists and the life of the literary men That is not the way that democratic society should function.

DR. SHRIMATI SEETA PARMANAND: Will the Parliamentary Secretary say in what form he is prepared *to* accept this Resolution?

DR. K. L. SHRIMALI: Well. Sir, as I have said, though I greatly appreciate the spirit of the Resolution—I have great respect for Kalidasa myself, he has been our great national poet—I am afraid that for the reasons which I have mentioned. I am not willing to accept the Resolution in the present form.

DR. SHRIMATI SEETA PARMANAND: Please give another form in which .....

MR. DEPUTY CHAIRMAN: Well, it is not for the hon. Parliamentary Secretary to do that. It is for the mover to put it up in an acceptable form. Yes. Mr. VijaiVargiya.

श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय : उपसभापति महोदय डा० श्रीमाली साहब मिनिस्ट्री का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं और उन्होंने इस प्रस्ताव का उत्तर भी दिया हैं । उन्होंने कहा हैं कि कालिदास के सम्बन्ध में इस प्रस्ताव का जवाब देने का जो मुझे अवसर मिला हैं वह मेरे लिए एक बड़ा भारी प्रिविलेज हैं । मेरा ख्याल हैं कि मुझे भी उसके उत्तर देने का जो अवसर मिला हैं, वह भी मेरे लिए एक बड़ा भारी "प्रिविलेज" हैं । मैं नहीं समझता था कि इस तरह का उत्तर इस विषय में दिया जायेगा । इसमें कोई संदेह नहीं हैं कि एजूकेशन डिपार्टमेंट के सामने बहुत सी कठिनाइयां हैं । सबसे बड़ी कठिनाई जो मैं महसूस करता हूं वह यह हैं कि उसके पास फंड्स बहुत कम हैं । एजूकेशन का जो मुहकमा हैं वह स्टेट लिस्ट में आता हैं, इसलिए बजट में एजूकेशन के मद में ज्यादा फंड नहीं दिया जाता हैं । मैं यह मानता हूं कि उनको मेरे प्रस्ताव से सहानुभूति हैं किन्तु मैं यह चाहता हूं कि जिस तरह से आप कालिदास और उसके ग्रन्थों के विषय में करना चाहते हैं, वह ज्यादा किया जाना चाहिये । लेकिन .....

MR, DEPUTY CHAIRMAN: He told you that the work would not suffer for want of funds.

श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय : Yes, he said that. इस सम्बन्ध में मुझे यह

कहना हैं कि मिनिस्ट्री की ओर से श्रीमाली साहब ने यह कहा हैं कि हमने अकादमी खोल दी हैं किन्तु इस के लिए जो रुपया रखा गया हैं उसको देखने से यही आभास मिलता हैं कि यह रुपया बहुत ही कम हैं प्रस्ताव में जो सुझाव रखा गया हैं उसको कार्यान्वित करने के लिए यह राशि बहुत ही कम हैं। उसको जब तक बढ़ाया नहीं जायेगा तब तक हमारा कार्य आगे नहीं बढ़ सकता हैं।

श्री उपसभापति : चलते चलते मिल जायेगा।

श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय : इस विषय में स्टेट का फंक्शन और सोसाइटी के फंक्शन के बीच में तफरीक करने के लिए डा० श्रीमाली ने जो बातें कहीं हैं वे उचित मालूम नहीं देती हैं। मैं तो यह कहूंगा कि उन्होंने जो बातें इस सम्बन्ध में कहीं वे पुराने जमाने की बातें हैं। आज तो नेशनलाइजेशन और सोशलाइजेशन का जमाना हैं। आज के जमाने में सरकार जनता के लिए सब कुछ करती हैं। आज हम देख रहे हैं कि उद्योगों को सरकार अपने हाथ में ले रही हैं, खेती का काम सरकार अपने हाथ में ले रही हैं, इसी तरह दूसरी चीजों को भी सरकार अपने हाथ में लेना चाहती हैं। आज सरकार जनता को रोटी खिलाने और पढ़ाने का काम अपने हाथ में ले रही हैं। आज सरकार दूसरे देशों में कलचरल और दूसरे तरह के मंडल भेज रही हैं। मास्को में अभी हाल में कलाकारों और साहित्यकारों का एक प्रतिनिधि-मंडल गया था। इस तरह से चीन, जापान और दूसरे मुल्कों में सरकार अपने प्रतिनिधि-मंडल भेज रही हैं, इन सब के लिए वह स्वयं खर्चा उठा रही हैं। सरकार जब इतना खर्चा दूसरे देशों में प्रतिनिधि-मंडल भेजने में खर्च कर सकती हैं तो क्या महाकवि कालिदास के लिए कुछ धन नहीं दे सकती हैं? श्रीमाली जी ने अपने भाषण में जो आश्वासन दिया हैं उससे मेरे प्रस्ताव का हल नहीं निकलता हैं। मेरे प्रस्ताव के सम्बन्ध में सदन के जितने मेम्बरों ने भाषण दिये, उससे कम से कम सरकार को यह विश्वास हो जाता हैं कि जनता भी इस चीज को चाहती हैं। भाषणों से सरकार को यह समझना चाहिये था कि मेम्बरों को कालिदास के सम्बन्ध में क्या सहानुभूति हैं। श्रीमती रुक्मिणी अरुंडेल ने अपने भाषण में यह कहा था कि :

"Sanskrit is beyond original languages. It is above them."

यह भाषा सारे हिन्दुस्तान को जोड़ने वाली कड़ी हैं। हम संस्कृत को और कालिदास के साहित्य को अलग नहीं कर सकते हैं। मेरा विश्वास हैं कि मिनिस्ट्री ने इस सदन की भावना को समझ लिया होगा कि कालिदास के लिये यहां पर कितनी प्रतिष्ठा हैं। जैसा कि अभी पृथ्वीराज कपूर ने कहा कि बम्बई में कालिदास के कई नाटक खेले गये, इस तरह से देश के अन्दर उसके लिए काफी ऊंची भावना हैं। उन्होंने यह सुझाव दिया था कि कालिदास के लिए तजुर्बे के तौर एक experimental स्टेज हो सकता हैं जिसमें पुराने नाटकों का प्रदर्शन किया जाय और आमदनी की भावना न रखी जाय। यह सुझाव बहुत सुन्दर हैं और सरकार को अवश्य कालिदास के विषय में सोचना चाहिये। जिस महाकवि के बारे में दूसरे देशों के विद्वानों ने प्रशंसा की हैं, वहां की जनता उनकी महानता को मानती हैं, स्वयं गेटे ने उनके बारे में प्रशंसा की हैं, हमारे सदन में दीवान चमनलाल जैसे व्यक्तियों ने उनकी प्रशंसा की हैं, तो फिर समझ में नहीं आता हैं कि सरकार इस विषय में क्यों सहानुभूति नहीं रखती हैं। डा० श्रीमाली जी कहते हैं कि मुझे इस प्रस्ताव से पूरी सहानुभूति हैं, मैं यह मानता हूं कि उनकी सहानुभूति कालिदास से, उसकी कला से हैं किन्तु वे उसके लिए कोई खास स्टेज कायम नहीं कर सकते। अगर हमारे मौलाना साहब यहां पर होते जिनकी सरपरस्ती में हमने हिन्दुस्तान की आजादी की लड़ाई लड़ी थी तो वे अवश्य यहां के मेम्बरों की राय की कद्र करते और हमारी तजवीज को पसंद

[श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय]

करते। डाक्टर श्रीमाली को इसका जवाब देना पड़ रहा है। मेरा यह कहना है कि साहित्य अकादमी जो कुछ कर रही है वह काफी नहीं है। मैं इसको तसलीम करता हूं कि हमारे इस प्रस्ताव को लाने से पहले ही साहित्य अकादमी ने कालिदास के लिये कुछ काम करना शुरू किया है और इसके लिये साहित्य अकादमी ने एक कमेटी भी बैठाई है और हमारे चेयरमैन साहब जो कालिदास के लिये काम होगा उसको एडिट करेंगे। कुछ शुरू हुआ है लेकिन वह नाकाफी है। अभी डाक्टर श्रीमाली साहब ने एक वाक्य कहा कि अगर उसके लिये पैसे की जरूरत होगी तो पैसे की कमी नहीं पड़ेगी। इस बात के लिये मुझे बड़ी खुशी है। मेरा कहना है कि काम होना चाहिये चाहे वह काम साहित्य अकादमी की मार्फत हो या और किसी ढंग से गवर्नमेंट करे।

मेरे प्रस्ताव में जो तारीख मुकर्रर करने की बात है उसके लिये मैं यह कहना चाहता हूं कि वह कोई भी तारीख हो सकती है। तारीख के बारे में कानें साहब ने कुछ बातें कहीं थीं। यह सही है। यह तारीख मुकर्रर न हो तो कोई दूसरी तारीख मुकर्रर हो। इसी तरह से कालिदास के लिये जो स्टेज की बात है उसके बारे में मुझे कहना है कि चूंकि उनका सम्बन्ध उज्जैन से रहा है इसलिये वहां एक स्मारक भवन बने। यह ठीक ही होगा कि उज्जैन की तरफ गवर्नमेंट इस बारे में ध्यान दे।

चूंकि गवर्नमेंट इस बारे में बहुत कुछ करना चाहती है और वह अकादमी की मार्फत करना चाहती है तो इसमें मुझे कोई एतराज नहीं है। मैं यह चाहता हूं कि इस प्रस्ताव के मूल भाग को अकादमी के पास या जो भी इस काम को करना चाहते हैं उनके पास भेज दिया जाय। डाक्टर श्रीमाली साहब ने खुद इस प्रस्ताव के साथ सहानुभूति बताई और यहां के सभी मेम्बरों ने इसके साथ सहानुभूति दिखाई और कहा कि कालिदास के लिये कुछ किया जाना चाहिये, कुछ सदस्यों ने विरोध भी किया था लेकिन उसमें यही था कि गवर्नमेंट मदद देने के लिये तैयार है, सिर्फ इनीशियेटिव जनता के हाथ में होना चाहिये, शुरूआत जनता को करनी चाहिये। इस बारे में मैं यह सूचना देना चाहता हूं कि हमारे यहां कुछ रुपया इस के लिये इकट्ठा किया हुआ है। उज्जैन के लिये कुछ रुपया मध्य भारत गवर्नमेंट के पास पड़ा हुआ है लेकिन इसके लिये सेंट्रल गवर्नमेंट को ध्यान देने की और मदद देने की जरूरत है।

कालिदास के लिये सिर्फ कुछ किताबों का ट्रांस्लेशन प्रकाशित कर देना काफी नहीं है। कुछ ऐसी बातें हैं जो कि तसफिया तलब हैं, उनमें कांट्रोवर्सी हैं, जैसे कि तारीख का निर्णय होना है, काल का निर्णय होना है, इसी तरह से स्थान का निर्णय होना है। तो सिर्फ अनुवादों को प्रकाशित कर देना ही काफी नहीं है। मैं समझता हूं कि इस बारे में यहां जो डिबेट हुई है, जो भावनायें व्यक्त की गई हैं, उन पर मिनिस्ट्री को ध्यान देना चाहिये और इसको अकादमी के पास भेजा जाना चाहिये ताकि यह मालूम हो सके कि किस तरह से कालिदास के लिये काम करना उचित है। यदि इसको मौलाना साहब, मिनिस्टर साहब और मिनिस्ट्री देखे तो हमारी मंशा पूरी हो सकती है।

जैसा कि मैंने कहा कि हमारी मिनिस्ट्री जिस ढंग से काम कर रही है उसमें कुछ सहानुभूति की कमी मालूम पड़ती है। जब तक हम संस्कृत को या संस्कृत के साहित्य को भारतवर्ष की प्राचीन सभ्यता से जुड़ा हुआ नहीं समझेंगे तब तक और बातों में भारतवर्ष की सांस्कृतिक उन्नति संभव नहीं है। सेकुलरिज्म का अर्थ यह नहीं है कि हम हिन्दुस्तान को जोड़ने वाली कड़ी को, जोड़ने वाली भाषा को, संस्कृत भाषा को भुला दें। अगर कोई यह समझता है या मिनिस्ट्री में कोई ऐसे लोग हैं जो कि संस्कृत की कद्र नहीं करते या उसकी मुखालिफत करते हैं या कालिदास की कद्र नहीं करते हैं या प्राचीन भाषा संस्कृत को नहीं

मानते हैं तो यह उचित नहीं हैं । सेकुलरिज्म में हम किसी धर्म विशेष से जुड़े हुये नहीं हैं लेकिन मुझे यह कहना हैं कि सारी भाषाओं की जड़ संस्कृत हैं, दक्षिण की द्रविड़ भाषाओं में और उत्तर की दूसरी भाषाओं में संस्कृत का प्रवेश काफी हैं । जो लोग संस्कृत की मुखालिफत करते हैं या उसकी कद्र नहीं करते हैं उन तक शायद यह बात पहुंची नहीं हैं । सांस्कृतिक उन्नति के लिये देश को इंसपिरेशन संस्कृत भाषा से ही मिल सकता हैं । जब तक यह बात उन तक पहुंचेगी नहीं तब तक न तो मिनिस्ट्री सही ढंग से काम कर सकती हैं और न हिन्दुस्तान का कल्चर ठीक ढंग से आगे बढ़ सकेगा ।

हर भाषा में कवि हैं और बड़े बड़े कवि हैं, तो हमारे भाई ओंकार नाथ ने कहा कि हम किस किस को स्मरण करेंगे और इससे तो हिन्दुस्तान का सारा बजट ही पूरा हो जायेगा । यह मेरा मतलब नहीं हैं । मेरा कहना यह हैं कि इसके लिये कदम बढ़ाया जाना चाहिये । बेसिक एजुकेशन के लिये मिनिस्ट्री ध्यान दे रही हैं तो फिर इसके लिये भी एजुकेशन मिनिस्ट्री को फाइनेंस मिनिस्ट्री से लड़ना चाहिये कि हमारा कल्चरल काम रुका पड़ा हैं और हम संस्कृत भाषा के माध्यम से हिन्दुस्तान के कल्चर को ऊंचा उठाना चाहते हैं जिसकी कि दुनिया ने कद्र की हैं । जिस तरह से शेक्सपियर और गेटे को दूसरे देशों में मान दिया जा रहा हैं उसी तरह से आप अपने महान कवि कालिदास के लिये भी थोड़ा बहुत करें । अगर इसको समझने वाले मिनिस्ट्री में नहीं हैं तो मैं नहीं समझता कि यह मिनिस्ट्री क्या कर सकती हैं या किस तरह से हिन्दुस्तान के कल्चर को ऊंचा उठा सकती हैं ।

तो मैं यही कहना चाहता हूं कि यहां की सारी डिबेट, यहां की सारी स्पीचेज मौलाना साहब के ध्यान में लाई जावें । मेरी यह अर्ज हैं कि हम तभी भारतवर्ष की संस्कृति और भारतवर्ष के कल्चर को ऊंचा उठा सकते हैं जब कि हम संस्कृत भाषा से अपनी आत्मीयता समझें और उसके महाकवियों की इज्जत करें । उनकी इज्जत करना हमारा लाजमी कर्तव्य हो जाता हैं । जब आपने एक अकादमी खोली हैं तो इस मिनिस्ट्री का यह कर्तव्य हो जाता हैं कि वह अकादमी को यह गाइडेंस दें, यह हिदायत भेजे कि इस तरह की डिबेट हुई हैं और इस तरह से कालिदास के लिये कुछ ज्यादा किया जाना चाहिये । आपने कहा कि रुपये की कोई कमी नहीं होगी, तो मुझे कोई एतराज नहीं हैं और अगर आप कहते हैं तो मुझे इस प्रस्ताव को वापस लेने में कोई एतराज नहीं हैं लेकिन इस भावना के साथ कि आप काफी रुपया देने वाले हैं, आप हमारी संस्कृत को, कल्चर को और संस्कृति को बढ़ाने वाले हैं । जब आप ऐसा करने को तैयार हैं तो मुझे कोई एतराज नहीं हैं । बाद में और देख लेंगे और समझ लेंगे । इस वक्त मैं इस प्रस्ताव को वापस लेने को तैयार हूं ।

The *Resolution was, by leave, withdrawn.

MR. DEPUTY CHAIRMAN: So, the amendments also fall through.

RESOLUTION RE STANDARD KEY BOARD IN DEVANAGARI SCRIPT FOR USE IN HINDI TYPEWRITERS.

DR. RAGHUBIR SINH (Madhya Bharat): Mr. Deputy Chairman, I beg to move the following Resolution:

> "This House is of opinion that Government should take early steps to evolve and recognise a standard key-board in Devanagari script for use in Hindi typewriters."

Sir, the Resolution is a simply straight one and does not admit of any controversy. It is an accepted fact that Devanagari is to be the script *franca*

*For text of Resolution, vide Col. 1230 of Debate dated 4th March 1955.